हरियाणा से लघुकथाएँ

निर्वाचित लघुकथाएँ

गाँव में जूते पहनने वालों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही थी, लेकिन वर्षों से मोची सिर्फ दो थे। दोनों की दुकानें आमने-सामने थीं और दोनों बुरे पड़ोसी थे। हालांकि दोनों के पास गुजारे लायक धंधा था, लेकिन एक आशंका प्रत्येक को परेशान किए थी, ''यदि ज्यादा लोग सामने आने वाले से जूते खरीदने लगे तो मेरा धंधा चौपट हो जाएगा, मैं बर्बाद हो जाऊँगा।'' दोनों ही को लगता कि तमाम दुनिया में अगर किसी से खतरा है तो बस सामने वाले से इसलिए उनमें प्रतिद्वंद्विता थी, ईर्ष्या थी, कटुता थी, शत्रुता थी। इसीलिए प्रत्येक सामने वाले के ग्राहकों को तोड़ने का भरसक प्रयत्न करता, ताकि पड़ोसी के हाथों बर्बाद होने से पहले ही उसे बर्बाद कर दिया जाए।

हालांकि किसी ने किसी को बर्बाद नहीं किया फिर भी दोनों ही की बर्बाद होने की आशंका सच होकर रही।

वह जूतों का निर्माण करने वाली एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी थी, जिसने ग्रामीणों की जरूरतों के अनुरूप सस्ते, टिकाऊ और आकर्षक जूते बना कर दोनों ही के मुँह का निवाला छीन लिया था।

– इसी पुस्तक से

अशोक भाटिया— अम्बाला छावनी में जन्म। हिंदी में पीएच.डी। पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर। आजकल सामाजिक कार्य और स्वतंत्र लेखन। **लेखन-क्षेत्र :** कविता, लघुकथा, बाल साहित्य, व्यंग्य, आलोचना। **प्रकाशित पुस्तकें :** 12 मौलिक और 12 संपादित पुस्तकें। लघुकथा-संग्रह 'जंगल में आदमी' और 'अंधेरे में आंख' (तमिल व मराठी में भी)। संपादित पुस्तकों में 'निर्वाचित लघुकथाएं' (हिंदी लघुकथा की संपूर्ण यात्रा), 'नींव के नायक' (1970 तक की हिंदी लघुकथाओं का दस्तावेज़) और आलोचना में 'समकालीन हिंदी लघुकथा' विशेष चर्चित। **संपर्क :** 1882, सेक्टर 13, करनाल-132001 (हरियाणा)। **फोन :** 094161-52100 **ई-मेल :** ashokbhatiahes@gmail.com

राधेश्याम 'भारतीय'- जन्म : जुलाई 1974, हसनपुर (करनाल)। **शिक्षा :** एम.ए. हिंदी, एम.फिल., पी-एच.डी.। **व्यवसाय :** हिंदी अध्यापक। **प्रकाशित कृति :** अभी बुरा समय नहीं आया है (लघुकथा संग्रह)। **संपर्क :** नसीब विहार कालोनी, घरौंडा (करनाल) 132114।

© साहित्य उपक्रम

साहित्य उपक्रम
B-7, सरस्वती कॉम्पलैक्स, सुभाष चौक
लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092
E mail : sahitya_upkram@yahoo.co.in
Phone : 91-9818603345, 91-9350809192

ISBN : 81-8235-130-1

प्रथम संस्करण : मार्च 2016

लेजर टाइपसेटिंग
साहित्य उपक्रम

मुद्रक
अर्पित प्रिंटोग्राफर्स, दिल्ली-32
ई-मेल : arpitprinto@yahoo.com

आवरण
संयोजन : सुधीर वत्स

मूल्य : 90 रुपये

हरियाणा से लघुकथाएँ

(61 लघुकथा लेखकों की 103 लघुकथाएँ)

संपादन

अशोक भाटिया

सहयोग

राधेश्याम 'भारतीय'

साहित्य उपक्रम

साहित्य से दोस्ती

दुनिया

दुनिया महज तर्क से नहीं चल रही
न ईश्वर न शोषण

पर दुनिया चलने के सहज तर्क हैं
जैसे ईश्वर अंधकार से उपजा था
—शोषण भी
जैसे शोषण अज्ञान में पला-बढ़ा
—ईश्वर भी

दुनिया बदलने के भी सहज तर्क हैं
जैसे शोषण नश्वर है— ईश्वर भी
जैसे ईश्वरी प्रणालियां म्यूजियम में जाएंगी
—शोषण भी

– विकास नारायण राय

अनुक्रम

हरियाणा का जन-मानस और ये लघुकथाएँ —*अशोक भाटिया*		9

खण्ड 1 : स्त्री के इर्द-गिर्द

पृथ्वीराज अरोड़ा	कथा नहीं	15
	अपनी बार	16
	पल	16
अशोक भाटिया	स्त्री कुछ नहीं करती!	18
	मोह	18
रामकुमार आत्रेय	टूटी चूड़ियाँ	21
रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'	कालचिड़ी	23
	पिघलती हुई बर्फ	24
उर्मि कृष्ण	यह मेरा भाई है	26
	नई औरत	26
विकेश निझावन	धरोहर	27
	कल, आज और कल	27
मधुकांत	अपना राज	29
	बोध	30
डॉ. मुक्ता	लक्ष्मीरूपा	31
कमला चमोला	सदुपयोग	32
अंजु दुआ जैमिनी	हतप्रभ	33
	अहसान फरामोश	33
श्याम सखा श्याम	सुख सरबतिया का	35
कमल कपूर	काश	37
	साझा दर्द	37
	पाठ	38
प्रदीप शर्मा 'स्नेही'	बिरादरी के मायने	40
	सीट	40

ओम प्रकाश 'करुणेश'	पुराना घर	42
	डिग्री	43
अमृतलाल मदान	मां का जन्मदिन	44
प्रद्युम्न भल्ला	बेटियाँ	46
कमलेश चौधरी	कोहरा छँट गया	47
इंदिरा खुराना	समझौते की जिन्दगी	49
आनन्द	माँ	51
उषा लाल	उड़ान	52
घमण्डीलाल अग्रवाल	रानी या नौकरानी	53
आशमा कौल	अपना-अपना भगवान	54
रेनू शर्मा	माँ का मोल	55

खंड-2 : खिड़कियाँ

विष्णु प्रभाकर	ईश्वर का चेहरा	59
	जाति या जान	59
	पश्चात्ताप	61
रमेश बत्तरा	सूअर	63
	नौकरी	63
	स्वाद	64
पूरन मुद्गल	गठबंधन	66
	जुनून	67
भगवान प्रियभाषी	सबसे अच्छी गेहूँ	68
	सत्यबोध	68
अशोक भाटिया	नमस्ते की वापसी	70
रामकुमार आत्रेय	और कौवा रो पड़ा	71
	दूसरा जल्लाद	72
मधुदीप	हाँ, मैं जीतना चाहता हूँ	74
	मुआवज़ा	75
तारा पांचाल	मान्यताएं	77
	बँटवारा	77
प्रेमसिंह बरनालवी	देवता बीमार है	79
कमला चमोला	देश दिल्ली	80
	सह यात्री	81

रूप देवगुण	लक्ष्मी	83
रतन कुमार सांभरिया	स्वर्ग का मार्ग	84
	पहचान	85
सुरेन्द्र गुप्त	दादा भाई नहीं रहे	87
	व्यवस्था	88
भुवनेश कुमार	अहंकार	91
	सम्मान	92
अरुण कुमार	स्कूल	91
	सीख	93
पवन चौधरी 'मनमौजी'	खिलौना	95
रणजीत टाडा	भारत-भ्रमण	96
दुलीचंद रमन	शहीद	98
	मोर्चा	98

खंड-3 : कुछ और खिड़कियां

विकेश निझावन	परिचय	103
अमृतलाल मदान	एक हाथवाला देवता	104
हीरालाल नागर	मच्छर और सिपाही	105
	दस रुपये का नोट	106
	बौना आदमी	107
विष्णु सक्सेना	भूल	109
आनन्द	पूर्वाभ्यास	110
	भूमण्डलीकरण	111
रमेश सिद्धार्थ	मूल्य-ह्रास	112
मुकेश शर्मा	सुनीता विलियम्स ने कहा था	113
	असली कमाई	113
अंजु दुआ जैमिनी	मीडियोकर	115
सुरेश जांगिड़ उदय	मानसिकता	116
	कार्य-कुशलता	116
नरेन्द्र कुमार गौड़	शंखनाद	117
ओम प्रकाश कादियान	धर्म-परिवर्तन	118
हरभगवान चावला	चंदा	119
जितेन्द्र सूद	वादा	120

शील कौशिक	वर्चस्व	121
लोक सेतिया	खज़ाने की खुदाई	122
गुरनाम सिंह	डाकू	124
कमलेश चौधरी	जोश	125
	परफैक्ट टैररिस्ट	126
इन्दु गुप्ता	दुकानदार	128
सुरेन्द्र कुमार	रक्षक	129
आचार्य भगवान देव चैतन्य	ठसक	130
राधेश्याम 'भारतीय'	चोर	131
	कीचड़ में कमल	132
मीनाक्षी जिजीविषा	नई वर्णमाला	134
पंकज शर्मा	जब तक	136
कृष्ण लता यादव	पहचान	137
गुलशन मदान	अनहोनी	138
वनीता चोपड़ा	दर्द की जुबान	139
अशोक कुमार	अपने-अपने कर्म	140
कृष्ण कुमार निर्माण	अगुवा	141
लेखक-परिचय		142

हरियाणा का जन-मानस और ये लघुकथाएँ

–अशोक भाटिया

हरियाणा दूर के ढोल की तरह सुहावना प्रदेश है। यह बाहर से जितना विकसित और आधुनिक दिखाई देता है, भीतर से आमतौर पर उतना ही बन्द और तंग-मन का समाज है। हरियाणा की अपनी मानसिक बनावट में जातिवादी सोच और अंधविश्वासों का बोलबाला रहा है। हरियाणवी समाज मोटे तौर पर जाति और गोत्र के झंडे और खाप के डंडे से चलता है। कभी आर्य समाज आंदोलन ने यहाँ स्त्री शिक्षा और तर्कपूर्ण सोच की एक खिड़की खोली थी, लेकिन उसका असर अब करीब खत्म हो चुका है। यहाँ माइग्रेटेड लोगों का बहुत बड़ा पॉकेट है, जो भारत-पाक विभाजन के समय अपने साथ उदारता और अनथक परिश्रम की प्रवृत्ति लेकर आया। लेकिन अधिकतर मूल हरियाणावासियों ने उनकी देन को मानने या उनका अनुकरण करने के स्थान पर उनके प्रति अलगाव का रवैया अपना लिया। इस संदर्भ में डॉ. भीम सिंह दहिया ने विस्तार से लिखा भी है।

हरियाणा देश में कन्या भ्रूण का सबसे बड़ा वध-स्थल बना हुआ है। इस क़त्लगाह में हर 1000 लड़कों के पीछे (नई गणना के अनुसार) 130 लड़कियों का वध होता है। विज्ञान कहता है कि यदि सभी भ्रूणों को विकसित होने दें तो 1000 लड़कों के अनुपात में 1009 लड़कियाँ जन्म लेंगी जबकि यहाँ 879 ही जन्म लेती हैं। हमें देश की आबादी बढ़ने की चिन्ता तो सताती है, लेकिन हम अपनी सोच नहीं बदलते। इसी सोच के पनपने से लड़के की चाह में अधिक सन्तान पैदा करते चलते हैं। एक तरफ हमारा पुरुष-प्रधान समाज 'यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता:' का श्लोक गले में कंठी-माला की तरह पहनकर घूमता है, दूसरी तरफ जन्म के पहले से लेकर मृत्यु पर्यन्त लड़की के प्रति हिंसा और उपेक्षा के भाव ही बने रहते हैं। क्या परिवार, क्या समाज और क्या राजनीति– स्त्री को लेकर भेदभावों, दबावों और अन्यायों की लगभग कभी खत्म न होने वाली एक लम्बी शृंखला है। स्त्री के प्रति यह रवैया बताता है कि हम एक असभ्य और क्रूर समाज का हिस्सा हैं।

हरियाणा में दलितों के प्रति दबंग वर्ग द्वारा हिंसा और धौंसपट्टी की (दुलीना, मिर्चपुर, गोहाना जैसी) घटनाएँ इस प्रदेश को आदिवासी क्षेत्र घोषित करने की

माँग करती हैं। पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में झूठी इज्जत के नाम पर हर वर्ष करीब 900 युवाओं की हत्याएँ कर दी जाती हैं।

जी टी रोड की बेल्ट को छोड़ दें, तो भीतरी हरियाणा में किसानों की स्थिति बड़ी दयनीय है। जमीन की जोत घटती जा रही है। करीब आधे किसानों के पास डेढ़ एकड़ से भी कम जमीन है। यहाँ बेरोजगारी के कारण अपराध का ग्राफ तेजी से बढ़ रहा है। प्रतियोगी परीक्षाओं में नकल और पेपर लीक के मामले जैसे कई कारक हैं, जो युवा वर्ग में बढ़ती नकारात्मक प्रवृत्ति की तरफ संकेत करते हैं। यहाँ सांस्कृतिक धरोहर के नाम पर जड़ वस्तुओं का संग्रहीकरण अधिक मिलता है; प्रगतिशील वैचारिक धरोहर को सँभालने और उसे जन-मानस तक ले जाने के प्रयास कम मिलते हैं। यहाँ खूबसूरत जड़ता के भीतर भदेस जड़ें जमाए बैठा है।

वेदों की भूमि, आर्य समाज की सोच और सूफी संत हाली का सन्देश यहाँ अपने समय में प्रगतिशील सोच के कारक थे। हरियाणा में लोक साहित्य की समृद्ध परंपरा है। सांग, रागनियां, लोक गाथाएँ, किस्सागोई, पहेलियाँ, हाजिर जवाबी यहाँ के जन-जीवन में रचे-बसे रहे हैं। लेकिन समय और समाज के साथ वे नहीं बदले। लखमीचंद, मांगेराम, फौजी मेहरसिंह जैसे लोकप्रिय कवि और सांगी बेहतर रचनाकार हुए, लेकिन समाज के मानसिक रूपान्तरण को लेकर वे वैसे सवाल खड़े नहीं करते, जैसे तब दूसरे प्रदेशों में विरसा मुंडा या ज्योतिबा फुले खड़े कर रहे थे। हरियाणा का लोक साहित्य समृद्ध तो है लेकिन उसमें तर्कशील समाज बनाने की पहल आमतौर पर दिखाई नहीं देती। जहाँ पहल मिलती भी है, उसे उपेक्षित किया गया है। महाशय दयाचंद मायना, देईचंद जैसे सांगी अपनी रचनाओं के जरिए जरूरी सवाल खड़े करते हैं, लेकिन जातिवादी सोच ने उन्हें उभरने नहीं दिया। आधुनिक दौर में अनेक लेखक, विशेष रूप से बालमुकुन्द गुप्त अपने व्यंग्य, स्वदेश दीपक अपने उपन्यास व नाटकों और तारा पांचाल अपनी कहानियों के जरिए तर्कपूर्ण और सामाजिक न्याय वाले समाज के सपने लेकर उपस्थित होते हैं। फतवों के इस समाज में से भी अंतरिक्ष को नापने वाली कल्पना चावला और माउंट एवरेस्ट को दो बार फतह करने वाली संतोष यादव की जीवन्त कहानियाँ निकल कर आती हैं। जिला जींद का बीबीपुर गाँव अपनी उदारता के कारण देश के नक्शे पर आता है तो सतरोल खाप 'ऑनर किलिंग' के दोषियों के सामाजिक बहिष्कार का फैसला लेती है। ये और ऐसे कई कदम सकारात्मक होते हुए भी बहुत अपर्याप्त हैं।

हरियाणा में प्रगतिशील जन-चेतना के सजग रचनाकार भी हैं और छद्म रचनात्मक व्यक्तित्व लिए हुए आत्म-मुग्ध लेखक भी। लघुकथा-क्षेत्र इसका अपवाद नहीं है। यहाँ हमने लघुकथा-लेखन की स्वस्थ परम्परा को उभारने का एक विनम्र और सीमित प्रयास किया है। इस पुस्तक में पाठकों को लघुकथा-लेखन की तीन पीढ़ियाँ एक साथ दिखाई देंगी। इनमें पंद्रह महिला लेखिकाओं की रचनाएँ हैं। इससे पहले भी हरियाणा की लघुकथा को लेकर सुशील राजेश की 'अक्षरों का विद्रोह' पुस्तक से लेकर रूप देवगुण, अनिल शूर आजाद से होते हुए डॉ. सुभाष रस्तोगी की हरियाणा की 'समकालीन हिन्दी लघुकथा' पुस्तक तक संपादन के प्रयास हुए हैं। यहाँ हमने अकादमिक होने की बजाय अन्य आधार चुने हैं। स्त्री-जीवन की लघुकथाएँ अलग खंड में दी हैं, जिनमें उनकी परेशानियाँ और उससे बाहर निकलने वाली सोच– दोनों मौजूद हैं। आपको यह प्रयास कैसा लगा? ये लघुकथाएँ देश-प्रदेश का प्रतिनिधित्व कहाँ तक कर पाई हैं?– अपनी राय अवश्य दीजिएगा।

1882, सेक्टर 13, अरबन इस्टेट,
करनाल-132001
094161-52100
ashokbhatiahes@gmail.com

30 जनवरी, 2016

खण्ड 1

स्त्री के इर्द-गिर्द

पृथ्वीराज अरोड़ा

कथा नहीं

वह पेशाब करके फिर बातचीत में शामिल हो गया।

दीदी ने कहा, ''पिताजी को बार-बार पेशाब आने की बीमारी है, इनका इलाज क्यों नहीं करवाया?''

उसने स्थिति को समझा। फिर सहज भाव से बोला, ''मैं अलग मकान में रहता हूँ, मुझे क्या मालूम इन्हें क्या बीमारी है?''

माँ बीच में बोली, ''तो क्या ढिंढोरा पिटवाते?''

उसने माँ की बात को नजर अन्दाज करते हुए कहा, ''देखो दीदी, अगर वह बताना नहीं चाहते थे तो खुद ही इलाज करवा लेते।'' थोड़ा रुककर आगे कहा, ''इन्होंने बहुत रुपए सूद पर दे रखे हैं, पैसों की कोई कमी नहीं इन्हें।''

पिता चिढ़े से बोले, ''जवान बेटे के होते इस उमर में डॉक्टर के पीछे-पीछे दौड़ता?''

इस हमले को तल्खी में न झेलकर उसने गहरा व्यंग्य किया, ''आप सुबह-शाम मीलों घूमते हैं, मुझसे अधिक स्वस्थ हैं फिर डॉक्टर के पास क्यों नहीं जा सकते थे?''

दीदी ने चौंककर देखा। आने वाली विस्फोट स्थिति पर निमन्त्रण करने की गरज से बीच में ही दखल दिया, ''आखिर माँ-बाप भी अपनी सन्तान से कुछ उम्मीद करते ही हैं।''

वह अपनी स्थिति को सोचकर दुखी होकर बोला, ''तुम नहीं जानती कि मेरा हाथ कितना तंग है। ठीक से खाने-पहनने लायक भी नहीं कमा पाता। तुम्हारी शादी के बाद तुम्हें एक बार भी नहीं बुला पाया।'' आँखों के गिर्द आए पानी को छुपाने के लिए उसने खिड़की से बाहर देखते हुए गम्भीर स्वर में कहा, ''सूद का लालच न करके मुझे कुछ बना देते तो मैं इनकी सेवा के लायक न बन पाता।''

पिताजी ने रुआँसे होकर बताया, ''मेरे दो दाँत खराब हो गए थे उन्हें निकलवाकर नए दाँत लगवाएँ हैं, देखो।'' उन्होंने दाँत बाहर निकाल दिए।

माँ बार-बार रोने लगी, ''क्या करते हो? तुम्हारा सारा जबड़ा भी बाहर निकल आए तो किसी को क्या?''

''दाँत न रहने पर आदमी ठीक से खा नहीं पाता?''

दीदी भी रोने लगी, ''दीपक, क्या तुम्हें माँ-बाप पर जरा भी तरस नहीं आता?''

दीपक का चेहरा बुझते-जलते लट्टू की तरह होने लगा। दुख और आक्रोश में वह काँपने लगा। अगले ही क्षण उसने नकली दाँतों का सैट मेज पर रख दिया और सिसकता हुआ गुसलखाने की ओर बढ़ गया।

अपनी बार

उसने दु:ख और रोष में अपनी बड़ी बहन को लिखा– ''दीदी! दो लड़कियों के बाद लड़का होने की हमें बहुत खुशी है, परन्तु जो फेहरिस्त तुमने बना भेजी है, वह सामान कहाँ से लाएँ? घर की हालत तुमसे छिपी हुई नहीं है। फिर रीति-रिवाज तो आदमी के अपने ही बनाए हुए हैं, वह उन्हें तोड़ भी तो सकता है।''

दो वर्ष बाद उसने अपनी माँ को लिखा–''माँ! जो कुछ मैंने लिख भेजा है। वह सामान जरूर आना चाहिए। पहला बच्चा है, वह भी लड़का। इधर बहुत बड़ा समारोह करने जा रहे हैं। मैं जानती हूँ कि घर की हालत क्या है परन्तु किया भी क्या जाए, ये रीति-रिवाज तो निभाने ही पड़ते हैं।''

पल

रमा ने सुलेखा की आँखों का अनुसरण किया। सुलेखा को ऐसा आभास हुआ कि रमा उसे ताक रही है। उसने उसकी ओर देखा। मुस्कराते देख पूछा, ''मुस्करा क्यों रही हो?''

''ऐसे ही।'' उसके चेहरे पर शरारत थी।

दोनों ने सुना, एक रिक्शावाला किसी यात्री पर उबल रहा था कि सड़क के बीचोंबीच ऐसे चल रहा था, जैसे बाप की सड़क हो। टकरा जाता तो...

''ऐसे ही क्या मतलब समझूँ। कौन है वह?''

उनके पास से एक आदमी गुजरा। वे चुपचाप हो गईं। शैड से निकलकर वे वहाँ खड़ी हो गईं, जहाँ कोई नहीं था।

''मेरे कॉलेज का है।''

''क्या हर रोज आता है?''

''हाँ।''

चीं-चीं... करती एक बस बस-स्टैंड की ओर घूम गई। उनका ध्यान क्षणभर के लिए उचट गया।

''कभी उसने बात करने की कोशिश की?''

''की, परन्तु...'' मैंने उसे रूखा-सा जवाब दे दिया।

''क्यों?''

''सामाजिक भय से।''

''तब भी वह आता है?''

''हाँ।''

''वैसे वह तुम्हें अच्छा लगता है?''

वह झेंपी फिर हौले से कहा, ''हाँ।''

''सेक्टर छहवाली बस अभी नहीं आयी,'' कोई दूसरे को बता रहा था।

''तब तो तुमने अच्छा नहीं किया।''

''क्या कह रही हो तुम।''

''मैं ठीक कह रही हूँ।'' कहकर रमा चुप हो गई। शायद किसी गहरी खाई में उतर गई हो। रुँधे कण्ठ से आगे बोली, ''ऐसी ही भूल मुझसे भी हुई थी।''

सुलेखा ने चौंककर रमा की ओर देखा।

''वह आता था, लगातार। सामाजिक डर से मैंने कभी उससे बात नहीं की। एक बार उसने बात करनी चाही तो मैंने तुम्हारी तरह उसे डाँट दिया। फिर वह कभी नहीं आया।''

उसने फिर विराम लिया। मन के दर्द को उलीचते हुए बताया, ''उसने कभी मुझ पर छींटाकशी नहीं की। कभी मेरा रास्ता नहीं रोका। कभी कोई शरारत नहीं की। कभी किसी मित्र के साथ नहीं आया। मुझे अच्छा भी लगता था। मेरे सामाजिक डर ने एक सभ्य और मर्यादित व्यक्ति को गँवा दिया, जो शायद मुझसे कुछ पल चाहता था, अपना दु:ख या सुख बाँटने के लिए... और शायद मुझे उसके लिए उपयुक्त समझता हो!'' उसने गहरा नि:श्वास छोड़ा और आगे कहा, ''सच मानो सुलेखा, अब मैं हर रोज उसकी राह देखती हूँ। एक खालीपन का-सा अहसास होता है। कल तक तो मुझसे कुछ पल चाहता था, आज मैं उन्हीं दो पलों की चाहना कर रही हूँ।''

अशोक भाटिया

स्त्री कुछ नहीं करती!

वह सबेरे सबसे पहले उठी, भैंस को चारा देकर जंगल-पानी गई, फिर आकर पति और सास-ससुर को चाय पिलाई, फिर भैंस को दुहने के बाद नहलाया, फिर उसका गोबर उठाकर उपले पाथने ले गई, फिर आकर आटा गूँथा, सब्जी-रोटी बनाई, फिर दोनों बच्चों को उठाया, नहलाया और खिला-पिलाकर स्कूल के लिए तैयार किया, फिर दही बिलोई, फिर सास-ससुर और पति को नाश्ता कराया, फिर सबके जूठे बर्तन साफ किए, फिर खुद नाश्ता किया, फिर भैंस को चारा दिया, फिर घर में झाड़ू-पोंछा लगाया, फिर कपड़े धोने चली गई, फिर नहाकर दोपहर की रोटी बनाई और खिलाई, फिर खेत में गुड़ाई करने गई, वापसी में सिर पर भैंस के लिए चारा लेकर आई, आकर खाना बनाया और बच्चों व सास-ससुर को खिलाया, फिर से बर्तन साफ किए, फिर सबको गर्म दूध पिलाया, बच्चों को सुलाया, फिर चौपाल में ताश खेलने के बाद शराब पीकर आ धमके डगमगाते पति को सम्भाला, उसकी गालियाँ सुनीं, उसे खाना खिलाया, उसकी ज्यादती सहकर उसे चैन की नींद सुलाया, फिर सन्नाटे में बचा-खुचा खाया और थकान के साथ सो गई...

फिर सबेरे सबसे पहले उठी...

मोह

पिताजी अब नहीं रहे। बस, अस्सी साल की बूढ़ी माँ है। उसे यह घर छोड़ना होगा। हफ्ते भर से बेटा आया हुआ है। माँ को ले जाने से पहले उसे सारा सामान ठिकाने लगाना है, लेकिन कैसे लगाए? जिस अलमारी को खोलो, वहीं पर सामान मुंबई की लोकल ट्रेन की तरह ठुंसा पड़ा है। बेटा कुछ सालों से कहता आ रहा है कि मोटा सामान निकाल दो। लेकिन माँ का फालतू का मोह कभी इस बात को नहीं माना। ले देकर कुछेक छोटी-मोटी चीजें माली और कामवाली को दी थीं, बस।

आते ही उसने सबसे पहले ट्रंकों वाला कमरा देखा था। कमरा मानो ट्रंकों का शोरूम ही था। लोहे की बाबे आदम के जमाने की तीन भारी-भरकम

पेटियाँ, फिर बड़े ट्रंक से छोटी अटैची तक कोई पन्द्रह नग बड़े करीने से ईंटों पर सजे हुए। पेटियों में ही दस बारह रजाइयाँ-गद्दे और इतने ही कम्बल-खेस-चादरें थीं—यह माँ बता चुकी थी। बताओ, इन्हें किसलिए सम्हाल रखा है। कितनी बार कहा है मोह छोड़ो, पर नहीं।

गहरी खीझ के साथ बेटे ने कप-बोर्ड के खाने देखने शुरू किए। वहाँ बदबूदार सीलन भरे खानों में बेतरतीब कपड़ों का आतंककारी साम्राज्य था। हर खाने में पोलीथीन के ढेर सारे लिफाफे मानो जब से घर में आए, फेंके ही न गए हों। 'फालतू के मोह में घर को कबाड़खाना बना दिया है।' वह अपने आपमें बुदबुदाया।

वह चाय बनाने के लिए रसोई में गया। सामने ही सात-आठ फ्राई-पेन और एक से पाँच लीटर तक हर साइज के कुकर पंक्तिबद्ध पड़े मुस्करा रहे थे। बताओ इतनों की क्या जरूरत थी? दो जीव और सारे जहाँ का सामान! चार-चार मूली कुतरे किसलिए, जब एक बार में एक का ही इस्तेमाल होना है। दर्जन भर तो चाकू इकट्ठे कर रखे हैं, जैसे किसी का कत्ल करना हो। कोने में दर्जन-भर छोटी-बड़ी कड़छियाँ जिराफ की तरह गर्दन निकाले खड़ी थीं। गुस्से से भरा वह चाय बनाए बिना बाहर आ गया।

माँ-बेटे में पिछले एक हफ्ते से सामान खपाने की कवायद होती रही है। बच्चों के लिए, मन्दिर में देने के लिए, जमादार, कूड़े-कबाड़ी और जल-प्रवाह के लिए हिस्से बनाए जाते रहे हैं।

आज माँ ने सबसे बड़ा ट्रंक खोलने के लिए बेटे को चाबियाँ थमाईं। ट्रंक नीचे उतरने पर माँ ने सामान देखना शुरू किया। सबसे ऊपर कोई पचासेक स्कार्फ और टोपियाँ रखी थीं। माँ ठण्ड बहुत मानती है, पर बेटे के सब्र का बाँध टूट गया। बोला—'क्या बेकार का ढेर इकट्ठा कर रक्खा है। इतनी टोपियों का क्या मतलब है? इनमें से पाँच-पाँच रख लो बस।'

'ये हलके और ज्यादा ठंडे मौसम के लिए अलग-अलग हैं। ये सब साथ लेकर जाऊँगी।' माँ निर्णायक स्वर में बोली।

टोपियों के नीचे आठ-दस स्वेटर देखकर बेटे का पारा और ऊपर चढ़ गया। स्वेटरों की एक अलमारी तो पहले से ठूंस रखी है। उसने सोचा। पर माँ वहाँ कोई खास चीज तलाश रही थी। स्वेटरों के बीच से गत्ते का डिब्बा उसे मिल गया, जिसे उसने बेटे की तरफ बढ़ा दिया।

'अब इसमें क्या है?' बेटा मानो तड़प उठा।

माँ ने डिब्बा खोला औरै कहा– 'ये तू रख।' हलके रंग के नवजात शिशु जैसे मुलायम जालीदार दो स्वेटर उसे देते हुए माँ ने कहा–'मेरे पोते-पोती का ब्याह होगा, उनके बच्चों के लिए हैं।' कहते हुए माँ के झुर्रीदार चेहरे पर रंगत आ गई।

एक क्षण में बेटे का सारा क्रोध बह गया। वह संज्ञाशून्य-सा हो गया। फिर आँसुओं की धार बह निकली।

रामकुमार आत्रेय

टूटी चूड़ियाँ

करवाचौथ थी उस दिन। पत्नी ने उस दिन पूरी श्रद्धा के साथ व्रत रखा था। नई साड़ी, नया ब्लाउज पहनने के साथ-साथ उसने हार-शृंगार भी पूरे मनोयोग के साथ किया था। उस दिन रात में पति ने उससे प्यार करना चाहा तो उसने हाथ जोड़ते हुए पति को ऐसा करने से मना किया। उसका तर्क था कि उसने व्रत रखा है और वह उस रात पवित्र बने रहना चाहती है। पति ने उसे मूर्ख, अनपढ़, गँवार एवं अन्धविश्वासी कहकर लताड़ लगाई। पत्नी चुप बैठी सुनती रही पर पति के साथ सोने को तैयार नहीं हुई। आखिर में उसे पति के इस तर्क के सामने हथियार डाल देने पड़े कि यदि उसने व्रत पति की खुशी एवं दीर्घ आयु के लिए रखा है तो उसे पति को खुश करना चाहिए, नहीं तो उसका व्रत एवं हार-शृंगार झूठ एवं पाखण्ड के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। पत्नी मन से नहीं, पर देह से उसके साथ लेट गई।

पति अपनी ताकत के बल पर पत्नी के इस अनमनेपन को तोड़कर उसकी देह को जाग्रत करना चाह रहा था। इस बीच चटक-चटक की आवाज के साथ पत्नी के हाथ दो चूड़ियाँ टूट गईं। पत्नी रोने को हो गई थी। उसने पति से प्रार्थना की कि वह तुरन्त उसे वहाँ से उठ जाने दे।

पति की गुर्राहट पत्नी से पूछ रही थी कि अब ऐसी कौन-सी आफत आन पड़ी जिसकी वजह से वह उसे प्यार के बीच में ही दूर हटने के लिए कह रही है। गुर्राहट जारी थी। अब वह प्यार किए बिना नहीं रुकेगा। तुम्हें तो कभी प्यार करना ही नहीं आया, न ही सीखेगी। कभी फूटे मुँह से यह नहीं कहा आज तक कि मैं तुमसे प्यार करती हूँ और तुम्हारे बिना मर जाऊँगी। पता नहीं किस मिट्टी की बनी हो तुम। एक पेट-भरू जिन्दा मादा पशु!

पत्नी की गिड़गिड़ाहट ने उसे समझाने का प्रयास किया कि चूड़ी टूटना बहुत बड़ा अपशकुन होता है। उसे पति चाहिए हमेशा-हमेशा के लिए, प्यार नहीं। इसलिए वह उसे तत्काल दूर हट जाए ताकि वह नहा-धोकर प्रभु से प्रार्थना कर सके कि उसका पति सही-सलामत रहे और वह खुद पति के मरने से पहले मर जाए।

पति अपनी देह के उफान के शान्त हो जाने के पश्चात ही उससे दूर हुआ।

दूसरी चारपाई पर जाने से पहले उसे दो-चार भद्दी गालियाँ देने से भी नहीं चूका था।

पति दूसरी चारपाई पर लेटते ही खर्राटे भरने लगा। पत्नी रोती हुई चारपाई से उठी, स्नानघर में जाकर ठण्डे पानी से नहाकर, धुले कपड़े पहनकर अपनी चारपाई पर आ बैठी। लेटने का मन नहीं हुआ। नींद का नामोनिशान कहीं आसपास भी नहीं था। टूटी चूड़ियाँ सीधे दिमाग से होकर कलेजे में जा घुसी थीं और वह दर्द उसे कचोट रहा था। सारी रात यूँ ही बैठी रही। आँखें थक जातीं तो रोना छोड़ देती। थोड़ी देर के बाद फिर रोने लगती।

पति नींद पूरी होने के बाद उठा। दिन निकल चुका था। सूर्य की रोशनी खिड़की की राह से भीतर आ रही थी। उसकी दृष्टि पास की चारपाई पर बैठी पत्नी पर पड़ी। उसकी आँखें अब भी गीली थीं। गालों पर आँसुओं के बहने के निशान बने हुए थे। पति से रहा नहीं गया। पूछ बैठा, ''सारी रात से यूँ ही बैठी हो?''

पत्नी चौंक उठी। मानो नींद से जागी हो। फिर दौड़कर पति को बाँहों में भरते हुए बुदबुदाई, ''पियाजी, मैं तुमसे प्यार करती हूँ... मैं तुम्हारे बिना जी नहीं पाऊँगी... मेरे लिए अभी बाजार जाकर नई चूड़ियाँ लाओ...!''

वह फूट-फूटकर रोए जा रही थी। पति अचम्भित-सा उसे देखे जा रहा था।

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

कालचिड़ी

काली चिड़िया सुबह-सवेरे रोज चली आती है और बरामदे में लगे आईने पर चोंच मारने लगती है। उड़ा देने पर कुछ देर बाद फिर चली आती है।

शुचिता खीझकर रह जाती। पता नहीं इस चिड़िया को आईने से इतनी चिढ़ क्यों है?

आज उसको देखने के लिए दिल्ली का एक परिवार आ रहा है। लड़का किसी फैक्टरी में इंजीनियर है। उसके मन में गुदगुदी-सी होने लगी। कैसा होगा वह लड़का।

माता-पिता भाई सभी घर सँवारने में लगे थे। पूरे घर में अफरा-तफरी मची थी।

शुचिता का जीवन कितना सुखद रहा है। स्कूल के दिनों में अरोड़ा जी उसके आदर्श शिक्षक थे। थे दुर्वासा रूप, पर उसको कभी नहीं डाँटा। कभी जरा-सी ठेस नहीं पहुँचाई। जिले-भर में प्रथम आने पर उसको जितनी खुशी हुई थी उससे कहीं अधिक अरोड़ा जी खुश हुए थे। उनकी आँखों में आँसू छलक आए थे। उसकी पीठ थपथपाकर बोले थे—''मैं जानता था मेरी बेटी इण्टर में पहला स्थान पाकर मेरा नाम रोशन करेगी।''

कॉलेज में पहुँचने पर प्रो. सिंह का भरपूर स्नेह मिला। भाषण एवं लेखन की कई प्रतियोगिताएँ जीतीं। उसकी सहेलियाँ उसे हमेशा ईर्ष्या भरी दृष्टि से देखा करती थीं।

पिता उसे बड़ा बेटा मानते रहे हैं। लड़की समझकर उसकी कभी उपेक्षा नहीं की। कितने अच्छे लोग हैं सब।

''वे लोग आ गए।'' खुशी से भरा छोटा भाई हड़बड़ाता हुआ घर में आया। साधारण कद-काठी का अकड़कर चलता हुआ युवक। साथ में नाक-भौं सिकोड़ते माता-पिता। घर में जैसे सन्नाटा छा गया। पूरा परिवार खातिरदारी में जुटा था।

शुचिता, गुड़िया की तरह सज-धजकर हाथों में चाय की ट्रे लेकर आ पहुँची। पिता बोले— ''यह है मेरी लड़की शुचिता, पढ़ाई-लिखाई में हमेशा

फर्स्ट आई है। भाषण और लेखन में विश्वविद्यालय स्तर पर कई पुरस्कार जीते हैं।''

शुचिता के पिता के शब्द हवा में खो गए। तीनों ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। सन्नाटा और गहरा हो गया। चाय पीने के बाद जब सब चलने लगे तो शुचिता के पिता ने पूछा– ''आपने क्या सोचा है?''

लड़के के माता-पिता अपनी ही हाँके जा रहे थे। अबकी बार लगभग गिड़गिड़ाते हुए शुचिता के पिताजी ने पूछा– ''हमारी बेटी कैसी लगी आपको? आपका बेटा तो बहुत होनहार है।''

''सोचकर बताएँगे।'' लड़के के पिता ने कहा।

''हमारे लड़के को खूबसूरत लड़की चाहिए। साँवली लड़की इसे पसंद नहीं।'' लड़के की माँ ने उबासी लेते हुए कहा।

दरवाजे की ओट में खड़ी शुचिता को सुनकर लगा जैसे उसको ऊँची मीनार से नीचे धकेल दिया गया है।

काली चिड़िया बरामदे में लगे दर्पण पर अब भी चोंच मार रही थी।

शुचिता ने इस बार उसको उड़ाने की चेष्टा नहीं की।

पिघलती हुई बर्फ

वे दोनों इतनी ऊंची आवाजों में बोलने लगे, जैसे अभी एक-दूसरे का खून कर देंगे।

''मैं अब इस घर में एक पल नहीं रहूंगी।'' पत्नी चीखी– ''बहुत रह चुकी इस नरक में।'' क्रोध से उसके नथुने फड़क रहे थे, टांगें कांप रही थीं। आंखों से आंसू बहने लगे थे।

''यह निर्णय तुम्हें बहुत पहले कर लेना था, अल्पना!'' पति ने घाव पर नमक छिड़का।

''अभी कौन-सी देर हो गई है।''

''जो देरी हो गई है, मैं उसका प्रायश्चित कर लूंगा।'' वह एक-एक शब्द चबाकर बोला।

''...।''

उसने सिगरेट सुलगाई। पैर मेज पर टिकाए। धुएँ के छल्ले अल्पना की ओर उड़ाकर लापरवाही से घूरने लगा।

''तुमने कहा था न कि मेज पर पांव टिकाकर नहीं बैठूंगा।'' अल्पना ने आग्नेय दृष्टि से पति की ओर घूरा।

''कहा था।'' और उसने पैर नीचे उतार लिये।

''और सिगरेट! इतनी खांसी उठती है फिर भी सिगरेट पीने से बाज नहीं आते।'' वह आगे बढ़कर पति के मुंह से सिगरेट झपटने को हुई तो उसने स्वयं ही सिगरेट जूते के नीचे मसल दी।

''और कुछ।'' वह गुर्राया।

''हाँ-हाँ जो-जो भी मन में हो, तुम भी कह डालो।'' वह अपने कपड़े अटैची में ठूंसती जा रही थी और सुबक रही थी।

वह एकटक देखता रहा। चुपचाप। उसके होंठ कुछ कहने को फड़कने लगे।

''क्या तुम मुझे कुछ भी नहीं कह सकते?'' वह भरभरा उठी। शिकायती लहजे में बोली–''मैंने मेज से पाँव हटाने के लिए कहा, आपने हटा लिये। मैंने सिगरेट पीने से मना किया, आपने सिगरेट जूते के नीचे मसल दी।''

''किसी की सुनो तो कोई कुछ कहे भी। तुमने सुनना सीखा ही नहीं। मैं कहकर और तूफान खड़ा करूं?''

''ठीक है। मैं जा रही हूं।'' वह भरे गले से बोली और पल्लू से आंखें पोंछने लगी।

''इतनी आसानी से जाने दूंगा तुम्हें?'' पति ने आगे बढ़कर अटैची उसके हाथ से छीन ली– ''जाओ खाना बनाओ, जल्दी। मुझे बहुत भूख लगी है।''

अपनी गीली आंखों से मुस्कराई और रसोईघर में चली गई।

उर्मि कृष्ण

यह मेरा भाई है

पथरीला, संकरा रास्ता था और खड़ी चढ़ाई। एक साधु उस मार्ग से तीर्थयात्रा को जा रहे थे। सामान के नाम पर उनके पास एक कम्बल, चिमटा और कमण्डल ही था। किन्तु चढ़ाई के कारण वह उसी में पसीना-पसीना हो रहे थे।

कुछ आगे चलकर उन्हें एक 11-12 वर्ष की पहाड़ी कन्या दिखी, जो पीठ पर एक बच्चे को लिए हुए थी। चार-पाँच वर्ष का वह बालक खूब स्वस्थ व हृष्ट-पुष्ट था। वह किशोरी उसे सम्भाले हुए फुर्ती से चढ़ाई चढ़ रही थी।

साधु ने उससे कहा– 'बेटी इतना बोझ उठाकर तुम कैसे चढ़ लेती हो। मैं तो इसी में हाँफ गया हूँ।'

किशोरी ने आँखें तरेरकर साधु की ओर देखा और बोली, 'महाराज, बोझ आपने उठाया हुआ है। मेरा तो यह भाई है।'

नई औरत

पति की मृत्यु पर उसने चूड़ी, बिछिए उतार देने से साफ इन्कार कर दिया। वहां उपस्थित सभी औरतें सकते में आ गईं। दु:ख की इस घड़ी में भी औरतों की कानाफूसी साफ सुनाई पड़ रही थी। एक बुजुर्ग महिला उसे एकांत में ले जाकर समझाने लगी– 'बहू पति की मृत्यु के संग चूड़ी, बिंदी उतार देने की परम्परा है। हम बिरादरी में क्या मुँह दिखायेंगे?'

'बुआ आत्मा अमर है। तुम सब हर क्षण राग अलापते रहते हो।' उसने धीमे से कहा।

'हाँ, सो तो है ही।'

'फिर उसकी अमर आत्मा के लिए मैं सब कुछ पहने रखूंगी। ये सब मेरे प्रिय को प्रिय थे। इन्हें उतारकर मैं उनकी आत्मा नहीं दुखाना चाहती।'

'बहू मैं तुम्हें कैसे समझाऊं। ये हमारे धर्म के रिवाज है।'

'बुआ थोथे रिवाजों को क्यों बांधकर रखा जाए?'

'तुझे सुहाग के लुट जाने का गम नहीं है क्या बहू?'

'मेरे दु:ख को तुम्हारे रिवाज नहीं समझ सकेंगे। मैं दु:ख का प्रदर्शन नहीं करना चाहती बुआ जी।' उसकी भीगी आवाज में दृढ़ता थी।

बुआ ने कानाफूसी करती औरतों के बीच आकर कहा–'वो नई औरत हे, हमार का सुने।'

विकेश निझावन

धरोहर

सावित्री के जब सातवीं सन्तान भी लड़की हो गई तो अस्पताल की डॉक्टर और नर्सें सभी घबरा गईं। सावित्री का घरवाला तो अस्पताल में ही ऐलान कर गया था कि अगर अबके भी लड़की हो गई तो वह उसका गला दबा देगा।

स्टाफ-नर्स रमा ने गुप्त रूप से डॉक्टर से बात की और बच्ची को मृत घोषित करवाकर अपने घर ले गई। घर पहुँचकर वह बच्ची को बड़ी भाभी के सुपुर्द करती हुई बोली, ''भाभी! तुम बच्ची को तरसती थीं न, आज भगवान् ने तुम्हारे लिए देवी भेजी है।''

''सच!'' भाभी ने बच्ची को गोद में ले लिया, ''हाय, कितनी प्यारी है!''

''पूछोगी नहीं भाभी कि यह कौन है?''

''जब तुमने खुद ही कह दिया कि परमात्मा ने मेरे लिए भेजी है, फिर मैं क्यों पूछूँगी!''

ममता की मारी भाभी बच्ची को चूमने-चाटने लगी थी। जरा देर बाद बच्ची रोने लगी तो भाभी ने उसे अपने स्तनों से लगा लिया।

बच्ची चुप हो गई तो रमा बोली, ''भाभी, तुम तो इसे ऐसे सटाए बैठी हो जैसे सच में दूध आ रहा है।''

''हाँ, आ रहा है री!''

''क्या!'' रमा चौंक पड़ी थी। सन्देहात्मक दृष्टि से उसने भाभी की ओर देखा तो भाभी बोल उठी, ''दूध माँ के जिस्म की धरोहर नहीं है री! दूध तो ममता की धरोहर होता है।''

कल, आज और कल

बेटी के दु:ख भरे पत्र से वे भीतर तक जड़ हो आई। अभी दस दिन पहले ही तो ब्याहा था बेटी को। विधवा होते हुए भी कोई कसर न छोड़ी। कल को कोई ताना न दे, यही सोचकर दहेज में एक-एक चीज गिनकर दी। बेटी भी इतनी सुशील और गुणी। और क्या चाहिए था उन्हें...?

कब गले से एक सिसकी फूट पड़ी, पता ही नहीं चला।

''क्या हुआ बेटी?'' भीतर से बूढ़ी माँ की आवाज थी।

वह समझ नहीं पाई, क्या कहे। बूढ़ी माँ नातिन का दु:ख सुनेगी तो कैसे सह पाएगी?

माँ बाहर आई तो सब-कुछ बतला ही दिया।

''मैं न कहती थी, सोच-समझकर शादी कर।'' बूढ़ी माँ का काँपता स्वर था।

''मैं भी उनको सबक सिखा दूँगी माँ! अभी मेरी बेटी की सारी जिन्दगी पड़ी है, इस तरह होम न होने दूँगी।''

''अब क्या हो सकता है? जो होना था हो गया।''

''हो क्यों नहीं सकता! कल ही जाकर बेटी को वापिस ले आऊँगी।''

''कैसी बात करती है तू! बेटी तो एक बार ब्याह दी सो गई। भूल गई तू अपने आदमी को! तूने भी तो बीस बरस गुजारे उसके साथ।''

उसने क्षणभर के लिए बूढ़ी माँ की ओर देखा, फिर गले की फाँस निगलती हुई बोली, ''मैंने तो तुझे माफ कर दिया माँ! मगर मेरी बेटी मुझे माफ नहीं करेगी...।''

मधुकांत

अपना राज

पंचायत के चुनाव से एक वर्ष पूर्व ही चरणसिंह मूच्छों पर तांव चढ़ाने लगा था। जैसे ही चुनाव पास आए उसे पहला झटका तब लगा जब उसके गाँव की सीट महिलाओं के लिए आरक्षित हो गई। कई दिन सोच विचार करने के बाद उसने अपनी पत्नी से चुनाव लड़वाने का निर्णय ले लिया। पत्नी को पहली बार जब उसने बताया तो उसने एकदम मना कर दिया। 'राज-पाठ चलाना के औरतों का काम सै?'– पत्नी ने कहा तो उसने तर्क दिया–इन्दिरा गांधी के औरत नहीं थी...? बार-बार चरण सिंह ने उसको समझाया और दबाव दिया तो उसको मानना पड़ा।

किसी और महिला ने पर्चा नहीं भरा तो सर्वसम्मति से उसकी पत्नी को सरपंच बना दिया गया। देर रात तक उसके घर में शराब की पार्टी चलती रही और बार-बार पार्टी में वह लोगों को यह समझाता रहा–लुगाइयाँ का राज आ गया, इब देश तरक्की करेगा।

किसी दिन कार्यालय में जाना होता तो चरणसिंह बैंत लिए आगे आगे और पत्नी घूंघट निकाले पीछे-पीछे। जब कुछ अधिकारियों ने उसको टोका तो वह दफ्तर में घुसते हुए पत्नी को आगे करने लगा। एक वर्ष बाद पत्नी में अकेले जाने का साहस भी आ गया।

सरपंच महोदया ने जब से पति द्वारा पीड़ित एक महिला का केस महिला आयोग में दर्ज कराया है, तब से चरणसिंह ने घर में ऊँचा बोलना और शराब पीना भी बन्द कर दिया। उसकी पत्नी का घूंघट अब मुँह से उठकर सिर तक पहुँच गया।

पत्नी अब लगभग अकेली आने जाने लगी। चरणसिंह अपनी पोली में बैठा खाने और हुक्का गरम करने की प्रतीक्षा करता रहता। जब कोई उधर न आता तो वह हुक्का गरम करने के लिए खुद ही बड़बड़ाते हुए उठ जाता– लुगाइयों का राज भी कुछ ना...।

बोध

पुष्पा, जो रात देर से समाप्त हुए 'नारी मुक्ति सम्मेलन' से लौट रही थी कि राह में चार गुण्डों ने मिलकर समीप की पाठशाला के अहाते में उसके साथ मुँह काला किया।

मन हुआ, तालाब में डूबकर जान दे दे पर वह पानी को छूकर ही लौट आयी थी।

घर के सामने चिन्तामग्न खड़े पिता उस पर बरस पड़े थे। वह सीधी अपने कमरे में जाकर फूट पड़ी थी। उसके अस्त-व्यस्त कपड़ों और नुचे हुए गालों से माँ ने ही अनुमान लगाया था।

कुछ देर बाद पिताजी को मालूम पड़ गया था। कभी वे अपने आप पर झुँझलाते तो कभी लड़की को देर से लौटने पर कोसते।

''आप ओम भाई के साथ ले जाकर थाने में रपट क्यों नहीं लिखवाते?'' पत्नी ने सुझाया।

''तू तो है पगली! रपट लिखवा दी तो लड़की को थाने ले जाना पड़ेगा। बयान देने होंगे। थानेवालों को तुम जानती ही हो। कचहरी के चक्कर अलग से लगाने पड़ेंगे। सारी इज्जत धूल में मिल जायेगी, फिर कौन करेगा शादी इसके साथ...।'' यह कहते हुए पिता ने अपना सिर धुन लिया था।

माँ का स्वर मन्द पड़ गया था।

किन्तु कमरे में पड़ी पुष्पा इस बात से अधिक आहत हुई। उसे लगा, जैसे पिताजी भी इस साजिश में शामिल हैं।

बिना अँधेरे की परवाह किये वह तेजी से उठी और मजबूत कदमों से पिछला दरवाजा लाँघकर, मुख्य सड़क पर आ गयी।

डॉ. मुक्ता

लक्ष्मीरूपा

मालकिन ने देरी से आने पर महरी को डांटते हुए कहा, ''एक तो तुम कल आई नहीं और आज भी इतनी देरी से आई हो... तुम्हें काम करना है तो करो, अन्यथा मैं दूसरी देख लूँगी।''

''नाराज क्यों होती हो बीबी जी हमारे यहाँ नातिन का जन्म हुआ है। समाचार मिलते ही कल मैं उसे देखने चली गई और आज देवी माँ का प्रसाद लगाकर लौटी हूँ। बहुत प्यारी बच्ची है, साक्षात् लक्ष्मी रूपा। जो भी उसे देखता है, उसकी नजरें उस पर टिकी रह जाती हैं। भगवान का लाख-लाख शुक्र है जो देवी माँ ने हमारी गोद में कन्या को डाला है।''

मालकिन ने उसे चुप रहने को कहा। ''बस करो बहुत हो चुका गुणगान... कोई बेटी के होने पर भी इतनी खुशियाँ मनाता है। अरे उसके घर में आते ही लोग मातम मनाते हैं। वह तो माता-पिता को कंगाल करके घर से विदा लेती है। लड़के के घर में जन्म लेते थाली बजाई जाती है। क्योंकि वह उनकी वंशबेल को बढ़ाता है। घर में दुल्हन लाता है और अन्तिम समय में मुँह में तुलसीदल व जल डालकर उन्हें मुक्तिधाम की यात्रा कराता है।''

महरी मालकिन का मुँह देख रही थी और स्तब्ध थी कि वे क्या कह रही हैं। वे पढ़ी लिखी होकर भी दकियानूसी ख्यालों की हैं। उससे रहा नहीं गया उसने मालकिन से कहा– ''यदि आप लोग लड़की के बारे में ऐसी सोच रखोगे और उसे दुनिया में जन्म नहीं लेने दोगे तो तुम लड़कों के लिए दुल्हन कहाँ से लाओगे। उनके घर-परिवार कैसे बसाओगे? इसलिए लड़कों के बराबर ही लड़कियों का होना आवश्यक है।''

मालकिन के पास उसके प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं था। वह अतीत की स्मृतियों में खो गई थी कि यदि उसने कन्या भ्रूण हत्या में योगदान न दिया होता तो आज उसकी बेटी बारह वर्ष की होती और वह चहकती, महकती इस आँगन की शोभा होती, उसकी संगिनी सहेली होती परन्तु अब स्वयं को अपराधिनी समझकर केवल प्रायश्चित कर सकती थी।

कमला चमोला

सदुपयोग

''खाऊ डिपार्टमैंट है। अब काजल की कोठरी में रहो तो कालिख तो पुतेगी ही। फिर कौन नहीं खाता आजकल रिश्वत, इस हम्माम में सभी तो नंगे हैं। ईमानदारी की नौकरी भला कितना दे देगी?''

पति की बात धर्मभीरू पत्नी को समझ आ गई। सच ही तो कहते हैं ये, आजकल कौन नहीं लेता रिश्वत?

अब पति जब उसके हाथ में नोटों की गड्डियाँ रखता तब हथेली में जलन नहीं होती बल्कि आँखों में सुनहरे ख्वाब से नाच जाते। पर न जाने क्यों मन में एक अबूझा-सा भय फिर भी व्यापा रहता। चुनांचे पत्नी ने भगवान के आगे एक गुल्लक रख दी। रिश्वतखोरी की प्रत्येक किस्त में से कुछ रकम गुल्लक में भी डाल दी जाती। सोचा कि जब गुल्लक भर जाएगी किसी जरूरतमन्द गरीब गुरबे को यह धन दे देंगे। दान का दान और रिश्वत के पाप से भी छुटकारा। पाप के भय की जो एक छोटी-सी दीवार थी, वो भी भरभराकर गिर पड़ी। अब पत्नी रिश्वत का एक हिस्सा भगवान को भी देने लगी।

बाबू जी की मृत्यु के बाद अम्मा जी को शहर लाना पड़ा। एक खामखाह की किल्लत पल्ले पड़ गई। बुढ़िया के पास ढंग के कपड़े भी तो नहीं, ले दे के वहीं दो चार बसी बसाई, मुचड़ी सूती धोतियाँ। पत्नी के माथे की बारहमासी त्यौरियों में दो त्यौरियों की बढ़ोतरी और हो गई। अब पहले इस बुढ़िया का काया कल्प करना पड़ेगा। कल को कोई मिलने वाले आए तो नाम तो उन्हीं का धरेंगे न? इनसे अच्छे कपड़े तो महरी ने पहने होते हैं। ये एक फालतू का खर्चा और आन पड़ा जान को। औरतें कौन सी कम हैं। खुद की सासें गाँव में चीथड़े पहने धक्के खा रही होंगी और यहाँ दूसरों की सासों को देखकर बातें बनाएँगी।

खर्चा भी मरा दम नहीं लेने देता। मुन्ने के जन्म दिन पर जो वीडियो रील बनवाई थी उसी के दो हजार देने अभी बाकी हैं, ऊपर से बुढ़िया के कपड़ों लत्तों का खर्चा और खड़ा हो गया। पत्नी ने मन को समझाया आखिर बुढ़िया इस समय विधवा और बेसहारा होकर ही तो उनके दर पे आई है, उनके अलावा है ही कौन उसका? गुल्लक के पैसों का इससे अच्छा सदुपयोग भला क्या होगा?

और उसी दिन गुल्लक तोड़कर हजार रुपयों के बुढ़िया के कपड़े आ गए।

अंजु दुआ जैमिनी

हतप्रभ

पैंतालीस वर्षीया शांति के पति का देहांत हुए चंद माह ही गुजरे थे कि लोगों ने उस पर अविवाहित जेठ से विवाह करने को लेकर दबाव डालना शुरू कर दिया।

वह हतप्रभ रह गई।

अवश्य यह समाज उस पर तरस खाकर ऐसा प्रस्ताव रख रहा है कि वह अकेली दो-दो लड़कियों का पालन-पोषण कैसे करेगी।

क्या जवाब देती समाज को? कैसे भाई समान जेठ का हाथ थाम लेती? जिस जेठ के खाने-पीने का इंतजाम पिछले बीस वर्षों से वह बहन बनकर करती आ रही है उसकी अंकशायिनी कैसे बन जाए? छी: छी:। कितना गिर जाएगी वह अपनी और अपने भाईसाहब की नजरों में। अपनी ओर से समाज के ठेकेदार जरूर अच्छा काम कर रहे हैं पर कम-से-कम दूसरों की भावनाओं का तो ध्यान रखना चाहिए।

शांति ने कानों पर हाथ रख लिए।

अगले ही पल वह समाज के सामने थी–

''जरूरी तो नहीं कि हर रिश्ता-बंधकर ही सफल हो पाए। मेरे बच्चों को पहले भी भाई साहब ही देखते थे और अब बच्चों के पिता के न रहने पर भी बच्चों के प्रति उनके प्यार-दुलार में कोई कमी नहीं आई। आपको अगर हमारी इतनी ही चिंता है तो प्लीज, हम दोनों के एक ही छत के नीचे रहने को लेकर कानाफूसियां बंद कीजिए, मेरा भला अपने-आप हो जाएगा।''

समाज हतप्रभ था।

अहसान फरामोश

पार्टी चल रही थी। बातें हो रही थीं। बातों का विषय घूम-फिरकर 'कामवाली बाई' पर आ टिका।

''बड़ी किल्लत है आजकल इन बाइयों की। रुपये भी ज्यादा लेती हैं और नखरे भी करती हैं। उस पर ये मुंह भी बनाती हैं। सिर पर डंडा लेकर खड़े

रहना पड़ता है।'' एक ने भड़ास निकालते हुए कहा।

''अच्छा मिसेज गुलाटी, शीला तो आपको स्कूल में मिलती होगी? आपने एप्रोच लगाकर उसे स्कूल में काम दिलवाया है।''

दूसरी ने मिसेज गुलाटी से बाई के बारे में पूछताछ की।

''वह परमानेंट हो गई है, पर क्या बताऊं? शीला अहसानफरामोश निकली। मैंने प्रिंसिपल से उसकी सिफारिश की थी और उसे नौकरी पर लगवाया। अब अहसान मानना तो दूर वह अपनी शक्ल तक नहीं दिखाती। एक बार मिली तो मैंने कहा कि घर पर थोड़ा साफ-सफाई का काम है तू आ जाना, सुनकर साफ मना कर दिया। ये लोग होते ही ऐसे हैं, काम निकल जाने पर मुंह फेर लेते हैं।'' मिसेज गुलाटी ने तिलमिलाते हुए जवाब दिया।

महिलाएं व्यंग्यात्मक मुस्कान होठों पर लिए एक-दूसरे को इस अंदाज से देख रही थीं जैसे कह रही हों–'नौकरी दिलाने के झांसे में इसी ने छह महीने तक शीला से बेगार करवाई थी फिर उस पर अहसान कैसा।'

श्याम सखा श्याम

सुख सरबतिया का

सरबतिया बड़बड़ाती जा रही थी, ''अरे! कैसी सुखी है वो, पति विलायत में बेटा अमरीका में और बिटिया मसूरी हॉस्टल में और यह मरी अपनी ठण्डी कोठरी में झुलसती रहती है (ठण्डी कोठरी से, उसका मतलब शायद एयरकण्डीशन कमरे से था) और मुझसे कहती है कि खसम दारू पीकर पीटता है तो छोड़ दे उसको। अरे! दारू की मार दुखती है तो उसकी बाहों की जकड़न जो सुख देती है; कलेजा ठण्डा करती है, उसको यह 'ठण्डी' क्या जाने?''

''मुझे तो इन बड़े लोगन की माया समझ में ना आवे है। जो मकान फिलेट (फ्लैट), कार, फ्रिज, ए.सी. के पीछे भागते रहवें हैं और असली सुख को भूल जावैं हैं।''

''अरे! मरद की मार के बाद, उसका पिआर (प्यार) कितना रसीला हो जावे है वो क्या खाक समझेगी यह।''

मार के बाद मरद की मनुहार और अंगरलियों के बीच उसके मुँह से झरने वाले फूल से सबद ''सरबतिया हमकू मुआफ कर देओ, तुहार फूल-सा बदन कैसा-केसा कर दीन्हा है रे। हम सच मा ही पापी हैं, सरबतिया।'' उसे क्या मालूम कि यह सब सुन कर टीसता बदन सचमुच फूल-सा महक उठता है।

''अरे! पूरा महीना खटने के बाद, रामू हमार बिटवा, जब हमार हथेली पर दो सौ रूपल्ली लाकर रक्खे है ना; तो रामू तो होवे है किरसन कन्हाई और हम जसोदा मैया हो जावैं हैं।''

''उसका अमरीकन बेटा आया। आते ही हाए माम! कहकर एक बोसा (चुम्मा) जड़कर बेशरम फोनवा से उलझ गया। एक घंटे में ही जाने कहाँ से दस-बीस जीन्स वाली परकटी, मरदानी लड़कियाँ और जुल्फों वाले जनाने लड़के आ मरे। उन्हें लेकर जो उड़न-छू हुआ, अमरीकन बिटवा तो पूरे दस दिन बाद घर लौटा था। और यह दस दिन परेतनी की तरह, उसके लाए तोहफों पर हाथ फिराती सूनी आँखों से छत निहारती रही थी।''

''क्या, यह सुख मिला उसे, जो मैं छुट्टी वाले दिन रामू को नहलाकर उसके बालों से जूँ निकाल कर अंगोर लेती हूँ।''

आज सरबतिया का पारा सातवें आसमान पर लगता है। पीछे आ रही बसन्ती ने सोचा और फिर कदम बढ़ा कर साथ चलते-चलते कहने लगी, ''अरी! मौसी हुआ क्या जो इतना बड़बड़ाए जा रही हो।''

सरबतिया ने बसन्ती की ओर देखा तो उसकी अपनी आँखों में एक अजीब अपनापन उतर आया था, ऐसा सरल दिलकश अपनापन जो ये गरीब केवल अपनों को ही नहीं, थोड़ा सा दिल मिल जाने पर परायों को भी दे डालते हैं।

सरबतिया कहने लगी, ''अरी बसन्ती! आज बड़ी कोठी वाली से चाय के साथ दर्द की गोली क्या माँग ली, पूछ मत क्या हुआ? गोली देकर बीबी फट पड़ी बम की तरह, कहने लगी,'आज फिर मारा होगा, तेरे पियक्कड़ मरद ने, मेरी समझ में नहीं आता, तुम क्यों रोज हाड़ कुटवाती रहती हो उससे, छोड़ दे मुए को और यहीं आकर मेरे सर्वेन्ट क्वाटर में रह मजे से' और भी जाने क्या-क्या कहा मेरा तो सिर भिन्ना गया था?''

पर जाने दे, वो बेचारी तो हमारे से भी गई-बीती है। तभी तो अकेली पड़ी रहती है, उस भुतहा कोठी में, अरे! नौकर-चाकर माली-दरबान, क्या खाकर पति, बेटे-बेटी का सुख देंगे। खामख्वाह गुस्सा गई मैं तो, वो तो सचमुच तरस के काबिल है।

'है ना,' कहकर सरबतिया अपनी खोली में घुस गई।

कमल कपूर

काश

''इत्ती ठंड़ी संझा में खुले में काहे खड़ी हो केसरी बड़े बेटा बहू आने वाले हैं कया?'' गेट खोल कर आँगन में पग धरते हुए कल्याणी ने पूछा तो एक ठंड़ी सांस लेकर केसरी ने जवाब दिया– ''ना जीजी! वे लोग तो बच्चों के साथ बर्फ देखने और छुट्टियाँ मनाने शिमला गए हुए हैं।''

''कर लो बात! और छोटे बेटा बहू?''

''वे लोग वैष्णो देवी गए हैं। कह रहे थे कि नए साल की शुरुआत वैष्णो देवी के दर्शन से करेंगे।''

''वाह रे सपूत! अपनी आई का ख्याल ना आया? देख लीजो केसर उनकी हाजरी को भगवती माई कभी कबूल ना करेंगी... हम कहे देती हैं केसर...'' वह कुछ और कहती, उससे पहले ही घर के सामने एक गाड़ी रूकी और उसमें से उतरी नव्या, लाल गुलाबों का बड़ा सा गुलदस्ता हाथ में थामे... पीछे थे उसके पति समीर, नेहा को गोदी में उठाए। केसर हूलस कर आगे बढ़ी तो नव्या ने उसे बाँहों में बाँध लिया।

''हम आपके साथ नया साल मनाने आए हैं माँ,'' समीर ने केसर के पाँव छूते हुए कहा तो वह अचकचा कर बोली, ''पर कंवर साहब! वहाँ आपके घरवाले हैं, उन्हें छोड़ कर मेरे पास... मेरे साथ? क्यों?''

''वहाँ कोई अकेला नहीं माँ! मम्मा के साथ पापाजी हैं भैया-भाभी और बच्चे भी हैं पर आप तो अकेली हैं न? सो नव्या का मन था कि हम आपके साथ नए बरस की शुरुआत करें,'' समीर ने मुस्कुराते हुए मुलायम स्वर में कहा तो कल्याणी न्यौछावर जाने वाले अंदाज में बोली, ''काहे ना कहती कंवर साहेब? आखिर को बिटिया जो ठैरी। अरे, हम तो यूँ कहें कि काश! राम जी ने हमारी गोद में तीन निगोड़े 'सपूत' ना डाल कर नवी बिटिया जैसी एक ही बिटिया डाली होती।''

साझा दर्द

दो दिन के नागे के बाद काम पर आई पारो पर नीरा बरस पड़ी, ''तंग आ गई हूँ, आए दिन की तेरी इन छुट्टियों से। अब कोई बहाना बना दे... घर वाले ने

देसी पीकर पीटा, गाँव से मेहमान आ गए या फिर संजू बीमार हो गया।''

''संजू मर गया बीबी जी!'' सूने ओर सपाट स्वर में पारो ने कहा तो नीरा पर जैसे बिजली टूट पड़ी, ''क्या...आ? कब? कैसे? बता पारो!''

''शनीचर की सांझ ... जाने कहाँ से क्या खाके आ गया... दो-तीन कै हुई और छोरे ने आँखें पलट लीं बीबीजी!'' कहकर रो पड़ी वह तो उसके आँसुओं को अपने आँचल में समेटते हुए नीरा ने भीगे स्वर में कहा, ''तो तू इतनी जल्दी काम पर क्यों आ गई? घर में गमी है लोग आ-जा रहे होंगे। घर रहती न।''

''संजू का दाना-पानी छूटा बीबीजी! चार पेट और भी तो हैंगे ना खाने वाले और आप कहे थे ना कि अब हम नागा करेंगी तो आप पगार काट लेवेंगे... इसी वास्ते...।''

''मैं इतनी जालिम हूँ क्या? अरे! मैं भी एक माँ हूँ... दूसरी मां का दर्द नहीं समझूँगी क्या? मैंने भी अपना बच्चा खोया था कभी... बस फर्क इतना है कि वह अजन्मा था और संजू सात साल का। हम साझे दर्द की डोर में बंधे हैं पारो।''

अब नीरा रो रही थी और पारो उसके आँसू पौंछ रही थी। इस पल मन-भेद, मत-भेद और वर्ग भेद से परे साझे दर्द की डोर में बंधी दो औरतें... दो माएँ थीं वे दोनों।

पाठ

सुभद्रा मंदिर से लौटी तो यह देखकर उसके तन-मन में आग लग गई कि मीनू सोफे पर पाँव पसारे बैठी, हाथ में मोबाइल थामे, न जाने किस से हँस-बतिया रही है।

''यह मोबाइल कहाँ से आया?'' कठोर स्वर में पूछा उसने।

''जी! पापा ने भेजा है। वो आपने कहा था कि लैंडलाइन पर बिल बहुत आता है। अपने बाप से बात करने का इतना ही चाव है तो उनसे कह मोबाइल भेज दें, सो उन्होंने भेज दिया।'' मीनू ने सहज स्वर में उत्तर दिया।

''पर, बिल तो मेरे मुन्ना की कमाई से ही जाएगा ना?'' कड़वे स्वर में बोली वह।

''जी नहीं, यह प्रीपेड है और पापा ने कहा है कि वही हमेशा इसमें बेलैंस डलवाएँगे।'' मीनू बेवजह मुस्कुराई।

''मुन्ना को आने दो, वही निपटेगा तुमसे...'' कहकर पाँव पटकती वह रसोई में चली गई।

''हाय सासू माँ! बड़ी भोली हैं आप। आपका मुन्ना ही तो कल शाम यह मोबाइल लाया था अपनी इस नवविवाहिता के लिए। उसके स्वाभिमान को यह स्वीकार नहीं कि शादी के बाद भी मैं अपने मायके वालों के सामने हाथ पसारूँ और फिर उसे दिन में कई बार मुझसे बातें भी तो करनी होती हैं न! अब मैं क्या करूँ सासू माँ, आपके मुन्ना ने ही पढ़ाया मुझे कि मम्मी जी से कहना– फोन पापाजी ने भेजा है।'' अति धीमे स्वर में कहकर मुस्कुराते हुए फिर पति का नम्बर मिलाने लगी।

प्रदीप शर्मा 'स्नेही'

बिरादरी के मायने

'मोना सुना है तुमने अपनी पसन्द का लड़का चुन लिया है क्या यह सही खबर है?' बड़ी बहन ने छोटी बहन से पूछा।

'हाँ, दीदी, यह सोलहों आने सच है। चुन ही नहीं लिया है, उससे शादी करने का भी निर्णय ले लिया है' मोना ने दृढ़ता से उत्तर दिया।

'अपनी बिरादरी में लड़कों का अकाल पड़ गया था क्या' बड़ी दीदी नाराजगी भरे स्वर में बोली।

'दीदी अब बिरादरी के मायने बदल रहे हैं। वह मेरी ही बिरादरी का है। मेरी ही तरह उच्च शिक्षित है। मेरी ही कम्पनी में कार्यरत है। सभी शिक्षितों की एक ही बिरादरी होती है। तो हुआ न वो भी 'मेरी ही बिरादरी का',' खिलखिलाते हुए मोना ने उत्तर दिया।

'मोना तुम्हें मम्मी पापा का जरा भी खयाल नहीं आया। उनकी नाराजगी का भी ध्यान नहीं किया। उन्हें भूल गई क्या?' बड़ी दीदी रूआँसी होकर बोली।

'नहीं, दीदी न ही उन्हें भूली हूँ न ही उनके द्वारा की गई अक्षम्य भूलों को भूली हूँ। कैसे भूल सकती हूँ। उन्होंने तुम्हें व मंझली दीदी को बिरादरी, रिश्तेदारी के नाम पर कैसे बेमेल और अल्पशिक्षित लड़कों के पल्ले बाँध दिया था जिस गर्त में तुम दोनों को धकेल दिया गया था क्या तुम दोनों आज तक उससे निकल पाई हो? तुम दोनों के साथ बिरादरी के नाम पर हुए अन्याय के बाद मैंने तय कर लिया था कि अपनी राह खुद चुनूँगी। और मुझे इसका कोई पछतावा नहीं है। बल्कि खुश हूँ कि मैंने अपनी बोली नहीं लगने दी।' मोना का चेहरा कहते-कहते रक्तिम हो उठा था। बड़ी दीदी निरूत्तर हो एक टक मोना को देखे जा रही थी। उनके मन की व्यथा अश्रुओं के रूप में बह निकली थी।

सीट

बस खचाखच भरी थी। तिल रखने को जगह नहीं थी। एक बेहद खूबसूरत लड़की और एक वृद्धा को सीट नहीं मिली। वे जैसे तैसे खड़ी हुई थी। धक्कों

से जैसे तैसे अपने आप को बचाने का निष्फल प्रयास करती वे सीट पाने की लालसा में बस में इधर-उधर नजर दौड़ा रही थी। उनके नजदीक बैठा एक युवक बार-बार सुन्दर लड़की को निहार रहा था। वह उसका सान्निध्य पाने को लालायित था। उसने जैसे तैसे थोड़ी जगह बनाकर आवश्यकता से अधिक विनम्रता से लड़की से बोला, 'आप थक गई होंगी, थोड़ी देर बैठ जाइए।' लड़की ने उस पर भरपूर नजर डाली। युवक को लगा, मन की मुराद पूरी होने वाली है। इससे पहले कि वह स्वप्नलोक से बाहर निकलता, लड़की ने वृद्धा को उसके पास बैठा दिया और उसकी ओर देखकर मुस्करा दी।

'पर मैंने तो यह सीट आपके लिए...' लड़की की ओर मुखातिब होते हुए युवक ने कहने का प्रयत्न किया पर आधी बात गले में ही अटक गई।

'महाशय, दयालुता दिखाने के लिए धन्यवाद। क्या तुम्हें दिखाई नहीं देता कि मुझसे अधिक सीट की जरूरत बूढ़ी माँ को है' लड़की ने सख्त लहजे में कहा।

युवक के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगी।

ओम प्रकाश 'करुणेश'

पुराना घर

पुराने घर में हम चार भाई रहते थे, बहनों की शादी हो चुकी थी। इस घर में हमारे बच्चों की चिल्ल-पौ के साथ अच्छी रौनक थी सो सभी अपने-अपने काम में मस्त-मौज लूटते हुए खुश थे। माँ-बाप के साथ हमें कोई डर नहीं था। चूंकि हम बेफिक्र होकर घर उनके सहारे छोड़कर दो-चार दिन के लिए कहीं आ-जा सकते थे। जरूरतों के हिसाब से अब यह घर छोटा पड़ता था; सो हमने नया घर बनाकर उसमें शिफ्ट कर लिया।

पत्नी और मैं नौकरी के लिए घर से बाहर जाते और बच्चे स्कूल। ऐसे में घर की सम्भाल कौन करे। अकेला घर छोड़ें तो डर कि पीछे से कोई सब कुछ साफ न कर दे।

मन में आया कि क्यूं न माँ को इधर बुला लिया जाए। पहले तो माँ ने ना-नुकर की। मान-मनुहार करने पर मैं माँ को अपने पास ले आया।

माँ ने इधर रमने की पूरी कोशिश की। लेकिन एक तो उसके हाण की औरतें नहीं थीं; एकाध अगर थी भी तो वे अकेली घर में ही बन्द रहती, टेलिविजन में कुछ न कुछ देखते हुए। माँ को ऐसा शौक नहीं था, सो माँ घर को जन्दरा मारकर बाहर थड़ी पर बैठकर हमारी बाट जोहती। बच्चों के पहले स्कूल से आने पर ही उसका जी थोड़ा-बहुत और होता।

एक दिन मैं ड्यूटी से घर लौटा तो माँ दीवार पर ठुड्डी रखे बाहर ताक रही थी और आँखों से टसर-टसर अश्रुधारा बह रही थी। माँ ने मेरी स्कूटर रूकते ही पल्लू से अपने आँसू पोंछते हुए मुस्कुराने की कोशिश की।

मेरे पूछते ही धम्म से बोल पड़ी– ''भाई कमी तो कोई है नी...बस्स यहाँ जी नी लगदा मेरा...वहाँ तो साथ की औरतें आज्यां...बस टेम कट ज्या भाई...यहाँ तो कोई आन्दा-जान्दा बी नी बोलदा... चुप्प रहणा पड़ै...'' माँ रूकने का नाम नहीं ले रही थी। इससे पहले माँ मुझे पुराने घर छोड़ने को कहे, मैंने कपड़ों का भरा बैग उठाया और माँ को स्कूटर पर बैठा पुराने घर ले गया।

पता चलते ही गली की औरतें एक-एक करके माँ के पास इकट्ठा हो गईं और बतरस में माँ मेरे नए घर की तारीफ के पुल बाँध रही थी। पुराने घर में रौनक फिर लौट आई थी।

डिग्री

'देखो! मेरी बेटी के 80 प्रतिशत नम्बर हैं बारहवीं जमात में... इसने अपने स्कूल में टॉप किया है।' पिता ने गर्व से कहा।

'हाँ! आपकी बच्ची होनहार है। इसे आगे पढ़ाइए... किसी अच्छी संस्था में कुछ सीख जाएगी...' टीचर ने समझाया।

'लड़की का धन है। माँ-बाप तो तिजोरी हैं। देख सम्भाल कर रखते हैं। पराया धन। हम इसे बाहर नहीं भेज सकते।' पिता ने कहा।

'इसमें क्या डर है? बाहर जाएगी नए-नए तजुर्बे आएंगे... बाहर फैकल्टी अच्छी है।' टीचर ने कहा।

'मास्टर जी, बात तो सोलह आने ठीक है। बस घर से बाहर न खाना-पीना, उठना-बैठना... फिर टेम बहुत खराब है जी... अपनी नजरों तले रहेगी... बेटी का धन है, मास्टर जी बुरा न मानियो।' पिता ने अपनी चिन्ता जताई।

'फिर आप अब क्या चाहते हो?' टीचर ने तुनकते हुए पूछा।

'मास्टर जी! ऐसा कोर्स बता दो, जो घर बैठे होजै अर इस छोरी नै इस्सी डिग्री मिलज्यै अक् कोई घर-बार भी ठीक-सा मिल ज्या।' पिता ने व्यावहारिक सरलता से कहा।

मास्टर ने भी सहजता से जवाब दिया– 'आप लड़की की भावनाओं को नहीं समझते और उसका फैसला मैं-आप नहीं कर सकते... आप उसे केवल डिग्री समझते हो...उसे बोझ मत मानो...।'

'फिर?'

'फिर क्या? वह अपना फैसला खुद लेगी।'

दोनों एक-दूसरे का चेहरा ताक रहे थे।

अमृतलाल मदान

माँ का जन्मदिन

आज स्वर्गवासी पिता की पहली बरसी थी। बूढ़ी माँ के इर्द-गिर्द सारा परिवार बैठा था। बेटे-बेटियाँ, बहुएँ, दामाद, उनके बच्चे, सब। सबका परस्पर मिलना-जुलना, आना-जाना था। किसी का जन्मदिन हो या शादी की वर्षगाँठ, सब एक-दूसरे को फोन करते, बधाई देते।

आज एक बेटा अपने कम्प्यूटर पर वंश-वृक्ष बनाकर लाया था। इसकी एक-एक प्रति सब इकाइयों को दे दी गई। इसमें सबके नाम के साथ जन्मतिथि अंकित थी। पिता की जन्मतिथि और पुण्यतिथि भी। माँ का सिर्फ नाम था, आगे की कोष्ठक रिक्त थी।

दरअसल माँ को अपना जन्मदिन खुद ही याद न था। सो, उसे कभी किसी ने 'हैप्पी बर्थडे' नहीं कहा था। हाँ, पिता जब तक जीवित रहे अपना जन्मदिन अपने लोहे की तरह मनवाते रहे और उपहार बटोरते रहे, किन्तु जीवन-संगिनी का जन्मदिन मनाने का ख्याल उन्हें कभी न आया। उन्होंने तो उस अनपढ़-फूहड़, बदसूरत औरत को कभी इन्सान ही नहीं समझा था। अक्सर उस बेचारी के साथ मार-पीट करते। सारी उमर उसे दबाकर रखा। हाँ, ढेर सारे बच्चे जरूर पैदा कर लिए थे उस मशीन से।

पर पिता की मृत्यु के बाद सबने माँ की खूब सेवा की थी, उसे पूरा आदर-सम्मान दिया था, हालाँकि पिता के सामने ऐसा करते डरते रहे।

''आज माँ का जन्मदिन भी तय करके लिखते हैं'', एक बेटे ने सुझाया। सबने सहर्ष अनुमोदन किया। ''बताओ माँ, कौन-सी जन्मतिथि लिखें तुम्हारी?'' दूसरे ने पूछा। ''हाँ दादी-माँ... नानी-माँ बताओ... हम भी तुम्हारा 'हैप्पी बर्थडे' मनाया करेंगे।'' बच्चे भी चहक उठे। माँ झिझकी तो बेटियों ने भी आग्रह किया, ''माँ याद तो करो, नानी ने कुछ तो बताया होगा कि कब पैदा हुई थीं तुम?'' ''कोई अंग्रेजी या देसी साल और महीना? सर्दियों, गर्मियों या बरसात का मौसम?'' ''या फिर कोई बड़ी घटना?''

माँ ने आँखें बन्द कर लीं ज्यों कुछ याद करने की कोशिश कर रही हो। सब आँखें खुलने की प्रतीक्षा में उत्सुक बैठे थे। आँखें खुलीं तो उनमें गजब की चमक थी।

''बताऊँ बच्चो असल में कब पैदा हुई थी मैं? पिछले साल... जिस दिन... जिस दिन... तुम्हारा पिता मरा था। आज मेरा दूसरा जन्मदिन है।'' बाकी तो सब चुप रहे। अबोध बच्चे 'हैप्पी बर्थडे दादी-माँ', 'हैप्पी बर्थडे नानी-माँ' कहते हुए बुढ़िया से लिपट गए, पर उसके नाम के आगे की कोष्ठक फिर भी रिक्त रही।

प्रद्युम्न भल्ला

बेटियाँ

बच्चों को स्कूल छोड़ने व लाने वाले रिक्शा वाले के चेहरे पर मैं कई दिनों से चिन्ता की रेखाएँ साफ पढ़ सकता था। एक दिन रहा नहीं गया तो दोपहर बच्चे छोड़कर जाते वक्त मैंने उसे आवाज दे ली।

'आओ बुद्ध राम, पानी पी लो बड़ी गर्मी है।' वह रुक गया।

मैंने उसे अपने कमरे में बिठाकर पानी पिलाया। पानी पीकर वह माथे और चेहरे का पसीना पोंछने लगा।

'क्या बात है कई रोज से लगता है तुम परेशान हो?'

'नहीं बाबू जी, ऐसी तो कोई खास बात नहीं। दरअसल, दस दिन बाद बिटिया की शादी करनी है और अपनी भाइयों, बिरादरी वालों यहाँ तक कि जिनके बच्चे छोड़ता-ले जाता हूँ सबसे पूछ चुका हूँ थोड़ी पैसे की कमी रह गई है।' वह सकुचाते हुए बोला।

'लेकिन मुझसे तो पूछा नहीं?'

'वो बाबूजी क्या है कि मेम साहब से पूछा था उन्होंने मना कर दिया।' कहते-कहते मुझे लगा कि वह रो ही देगा।

'कितनी कमी रह गई?'

'यही पाँच हजार रुपए।'

'लौटाओगे कैसे...' मैंने पूछा।

'हर महीने पाँच-पाँच सौ देकर... बाबू जी। आप चाहें तो ब्याज भी।' कहते हुए उसकी आँखों में चमक-सी आ गई थी।

'ये लो पाँच हजार रुपए जब चाहो लौटा देना।' मैं उसे रुपए देकर तुरन्त भीतर घुस गया। भीतर घुसते ही और उसके जाते ही पत्नी की आवाज सुनाई दी।

'आपने पाँच हजार रुपए उठाकर उसे दे दिए न पता मालूम न ठिकाना और ये पैसे तो मैंने वैसे भी अगले हफ्ते आ रही बिटिया के लिए रखे थे। उसे कपड़े सामान वगैरा...।'

'मैंने भी तो यह पैसे बिटिया को ही दिए हैं...बेटी चाहे गरीब की हो या अमीर की।'

कमलेश चौधरी

कोहरा छँट गया

ओम प्रकाश के बेटे का विवाह था। इसमें शामिल होने के लिए अन्य रिश्तेदारों के साथ उसकी तीनों बुजुर्ग हो चुकी बुआ भी आई हुई थीं। ओमप्रकाश की पत्नी सुभद्रा को दम लेने की फुरसत नहीं थी। वह शादी के रस्मों को पूरी करने, जेवर कपड़े को सम्भालने एवं मेहमानों की आवभगत का प्रबन्ध करने में जुटी हुई थी। ओमप्रकाश की दो बुआ सम्पन्न घरों में थी मगर एक बुआ का घर गरीब था। बस जैसे तैसे गुजारा हो जाता था। शादी खुशी-खुशी सम्पन्न हो गई। सुभद्रा की देवरानी मणि ने कहा– सुभद्रा जीजी, एक बात कहूँ। विदा करते समय आप नारायणपुर वाली बुआ का थैला किसी बहाने से अवश्य देखना।

''क्यों ऐसी क्या बात है?'' सुभद्रा ने हैरान होकर पूछा।

''बात ऐसी है मैंने बुआ को दो तीन बार चोरी-चोरी अपने थैले में कुछ रखते हुए देखा है।'' मणि बोली।

सुभद्रा का दिल मान नहीं रहा था कि वह बुआ जी की इस प्रकार बहाने से तलाशी ले। मगर मणि बार-बार टोकती रही तो वह अनमनी-सी हो कर बोली–चलो देख लेंगे। सुभद्रा का विचार था कि मणि के दिमाग से ये बात निकल जाएगी। जब तीनों बुआ अपना नेग लेकर चलने को तैयार हुई तो मणि ने फिर सुभद्रा को तलाशी वाली बात याद करवा दी। झिझकती हुई सुभद्रा ने कहा–बुआ जी, रोहित का जरी-पटका कहीं कपड़ों में गुम हो गया। जरा देखना तो कहीं गलती से आपके कपड़ों के साथ थैले में रखा गया हो।

''ठीक है बहू।'' यह कह कर बुआ जी एक एक चीज निकाल कर पूरा थैला उलटा कर के झाड़ दिया। उसमें से एक पोटली निकली। मणि बोली– बुआ जी, इस पोटली में क्या है?

इसमें मेरी गरीबी का सबूत है बहू। सुबह शाम चाय के साथ तुम जो मिठाई लड्डू बर्फी आदि मुझे देती थी, मैं उसमें कुछ बचा कर अपनी छोटी-सी पोती के लिए रख लेती। उसने मुझ से कहा था कि दादी माँ मेरे लिए बहुत-सी मिठाई लाना।

यह कहर कर बुआ जी ने पोटली खोल कर दिखा दी।

मणि के साथ-साथ सुभद्रा को भी जैसे काठ मार गया। वह बार-बार मणि की बात मान कर पछता रही थी। हिचकिचाते हुए सुभद्रा ने बात सम्भालने की कोशिश की। वह बोली—नहीं बुआ जी ऐसी बात नहीं है। आप गरीब क्यों हैं। क्या किसी के घर खाने जाती हैं आप?

बुआ बोली—ठीक है बहू मगर मुझे ये तो बता दो कि रोहित का जरी-पटका ढूँढ़ने के लिए तुमने और किस-किस के थैले खुलवा कर देखे हैं। सिर्फ मेरा ही ना? बोलो मैं क्या झूठ कहती हूँ?

तभी सुभद्रा ने बुआ जी के पैर पकड़ कर कहा—आप इस घर की बड़ी बेटी हैं। हमारे ससुर की बहन हैं। जिस घर से बेटियाँ नाराज हो कर जाती हैं वहाँ कभी खुशहाली नहीं रहती। हमें माफ कर दें बुआ जी।

''ठीक है। मगर ऐसा किसी के साथ मत करना बहू।'' बुआ ने सुभद्रा के सिर पर हाथ रखा।

सुभद्रा दौड़ कर भण्डार घर में गई और मिठाई का बड़ा-सा डिब्बा लाकर बुआ जी के थैले में रख दिया।

कोहरा छंट गया था।

इंदिरा खुराना

समझौते की जिन्दगी

मिसेज रीटा कपूर बच्चों को स्कूल भेजकर किचन समेटकर लाबी के इजी-चेयर पर बैठ गई। यह प्राय: रोज का रूटीन है। कॉफी की चुस्कियाँ लेते हुए अखबार की सुर्खियाँ पढ़ते हुए वह सुबह की भागदौड़ की थकान मिटाती है।

आँचल वर्मा कॉलेज टाईम की सहेली जो पास की कॉलोनी में रहती है कभी-कभार फुर्सत पाकर आ जाती है। आज आँचल के चेहरे पर चिन्ता के गम्भीर भाव थे। वह स्वयं कुर्सी खींचकर रीटा के पास बैठ गई और धीमे स्वर में कहने लगी–'रीटा! कल रात मैंने अपनी आँखों से जो कुछ देखा मुझे विश्वास नहीं हुआ। सारी रात दृश्य की फोटो रील आँखों के सामने घूमती रही।'

रीटा ने भेदभरी दृष्टि से मुस्कुराकर कहा–ऐसा क्या देखा आँचल, जिससे तू सारी रात परेशान रही?

तुझे बुरा लगेगा, दु:ख होगा रीटा, कल वर्मा जी के साथ मैं होटल रीजेंसी में डिनर लेने गए थे। डिनर का इंतजाम खूबसूरत लॉन में किया गया था। वहाँ मैंने मिस्टर कपूर को किसी फैशनेबल महिला की कमर में हाथ डाले हुए आते देखा। हमसे थोड़ी दूर टेबल पर बैठ गए। उनके हँसने, एक दूसरे का प्रेमिल भाव से हाथ पकड़ने से साफ लगता था कि उनके एक-दूसरे से अन्तरंग सम्बन्ध हैं। रीटा क्या तू इन सब बातों से अनजान हैं?

रीटा की आँखों में आँधी से पहले की खामोशी छा गई। फीकी मुस्कान होठों पर लाते हुए कहा– ''आँचल परिवार चलाने और बच्चों के भविष्य के लिए बहुत कुछ झेलना, सहना पड़ता है। उनका सम्बन्ध कई वर्ष पुराना है। पहले तो कहते रहे, मेरी मित्र है। धीरे-धीरे असलियत का पता चलता गया। पहले तो झगड़े, रोये लेकिन अब हम ठंडे पड़ चुके हैं।''

''कॉलेज में तू कितनी बोल्ड, धाकड़ थी। नारी शोषण और अधिकार पर तेरे भाषण कितने जोरदार होते थे। आज तू हार मानकर समझौते की जिन्दगी जी रही है''–आँचल ने रोष भरे स्वर में कहा।

क्या करूँ आँचल, माता-पिता नहीं रहे, भैया-भाभी विदेश में हैं। रोज-रोज के कलह में बच्चों का भी जीवन नरक हो जाएगा। यदि तलाक लेती हूँ तो

बच्चों का भविष्य नष्ट हो जाएगा। मैं उनके रवैयों को नहीं बदल सकती, मैं केवल बच्चों के लिए समझौता कर सकती हूँ, क्योंकि मैं माँ भी हूँ।

''यदि मिस्टर कपूर इसी तरह दूसरे पुरुष के साथ तुझे देख लेते तो?'' आँचल ने उसके ज़मीर को झिंझोड़ते हुए कहा।

पुरुष रखैल रख सकता है, वेश्यालय जा सकता है, महिलाओं से फ्लर्ट कर सकता है। महिला लक्ष्मण रेखा लाँघती है तो बदचलन, कुलटा कहलाती है।... और दोनों के बीच सदियों का दर्द भरा मौन पसर गया।

आनन्द

माँ

काम की वजह से पिता अक्सर बाहर होते थे। माँ को घर पर रहना पड़ता था। दिन भर माँ कुछ तलाशती-सी इधर-उधर भटकती रहती। दिन ढलने के साथ माँ की बेचैनी बढ़ने लगती और शाम होते होते वह गहरी निराशा में डूब जाती। रात को मैं अपने बिस्तर में होता। माँ चर्खा कातते हुए कहानी सुना रही होती। मेरे लिए हुँकारी भरना जरूरी होता। माँ कहती, ''फौज में नक्कारा, बात में हुँकारा।''

चर्खे की लय लोरी का काम करती और मुझे नींद आने लगती। मेरे चुप होते ही मां चर्खे से उठ खड़ी होती। मुझे पुकारती जगाती और कहानी सुनने की मनुहार करती। इसके लिए भय तक दिखाती, ''कहानी के बीच में सोने से पाप लगता है।''

माँ को शायद अनिद्रा का रोग था।

पिता का आना पहले से तय नहीं होता था। वे अचानक आते थे। लेकिन यह निश्चित होता कि वे शाम से थोड़ा पहले आते थे। उनके आते ही माँ खिल उठती। माँ तुरन्त नहाकर नए कपड़े पहनती और कोई गीत गुनगुनाते हुए गजब की फुरती से रोजमर्रा के काम जल्दी से निपटाना चाहती। उस रात खाना खिलाकर माँ चाहती कि मैं जल्द सो जाऊँ। मैं आग्रह करता, ''कहानी तो सुनाओ।''

''देख तो रहा है, तेरे बापू कितना थके हैं। कहानी सुनाऊँगी तो नींद नहीं आएगी उन्हें। आज तू सो जा। कल सुनाऊँगी।''

माँ कहती और मैं आँखें बन्द कर लेता। लेकिन उस रात मुझे पता चलता कि नींद के लिए कहानी और चर्खे की लय कितनी लाजिमी बन चुकी है। यह जानने के लिए कि मैं सो चुका हूँ, माँ एक-दो बार मेरी बन्द आँखें देखती और दीया बुझा देती।

सुबह जागते हुए भी माँ देर तक चारपाई नहीं छोड़ती। मुझे सुनाते हुए बापू से कहती, ''बहुत दिनों बाद गहरी नींद आई है।'' सचमुच माँ का चेहरा गहरी नींद के बाद की तृप्ति से दिप दिप कर रहा होता।

कितनी भोली थी माँ। उसे कल्पना तक नहीं होती कि चर्खे की लय पर सोने का आदी मैं भी पूरी रात जागता रहता था।

उषा लाल

उड़ान

यह लता का रोज का नियम था। वह हर शाम अपने पिता की दुकान पर चाय देने जाया करती थी। उस दिन भी वह अपनी धुन में मस्त चली जा रही थी कि रास्ते में मन्दिर की दीवार के नीचे उसने एक मुड़ा-तुड़ा नोट पड़ा देखा। पाँच सौ का नोट देखकर भी उसके चेहरे पर कोई भाव न आया क्योंकि नोट तो उसने उठाना नहीं था। माँ ने बचपन से ही उसके मन में किसी की चीज न उठाने की बात कूट-कूट कर भर दी थी। नोट को अनदेखा कर वह अपनी दुकान पर गई, पिता को चाय पिलाई और बर्तन लेकर घर वापिस आ गई।

घर आकर जब उसने पाँच सौ रुपए के नोट की बात अपनी माँ को बताई तो माँ ने कहा, ''बेटी! मैंने तो तुम्हें किसी की चीज न उठाने के लिए कहा था, लेकिन वह तो रास्ते में पड़ी हुई चीज है। यदि उस नोट को तुम नहीं उठोगी तो कोई और उठा लेगा। इसलिए अगर वह नोट अब भी वहाँ पड़ा हो तो उठा ला।''

लता को तो जैसे पंख लग गए। वह बिना रुके रास्ते में एक साइकिल वाले से टकराते हुए भी भागती चली गई। जब वहाँ जाकर देखा तो वह नोट अब भी वहीं पड़ा मुस्करा रहा था, मानो कह रहा हो, ''तुम मुझे उठा लो। तुम से ज्यादा मेरा सदुपयोग और कोई नहीं कर सकता।'' नोट को उठा कर लता की आँखों में आँसू आ गए, क्योंकि अब वह स्कूल में दाखिल हो सकेगी। एक दिन उसने अपनी माँ से कहा था, ''माँ! मैं भी पढ़ूँगी।'' उत्तर में माँ ने अपनी असहाय स्थिति छिपाते हुए कहा था, ''बेटी, अभी तो तुम पाँच वर्ष की हो। जिस दिन छह साल की हो जाओगी, स्कूल में तेरा दाखिला करवा दूँगी।'' लता जब नोट लेकर पहुँची तो माँ ने पूछा, ''बेटी, तुझे इन पैसों से क्या लेकर दूँ।'' लता ने झट कहा, ''माँ! मुझे तो कलम, दवात, तख्ती और कायदा चाहिए।'' माँ ने उसे छाती से लगा लिया और अगले ही दिन उसका स्कूल में दाखिला करवा दिया। अब उसकी उम्र पाँच वर्ष की जगह छः वर्ष लिखवा दी गई थी। वही लता आज अपने जीवन के सर्वोच्च पर है।

घमण्डीलाल अग्रवाल

रानी या नौकरानी

अनु आज विवाह बंधन में बंध चुकी थी। विदाई की घड़िया करीब थीं। सभी सहेलियाँ अनु को तरह-तरह की सीख दे रही थीं। तभी अनु की माँ उसके निकट आकर बोली– ''बेटी! ससुराल में जाकर अपने सास-ससुर को माता-पिता, जेठ-देवरों को भाई, ननदों को बहने तथा पति को परमेश्वर समान समझना।''

माँ की बात पूरी होते ही अनु ने उत्सुकता से पूछा– ''मां एक बात और बताओ। मैं अपने-आपको क्या समझूँ–रानी या नौकरानी?'' इतना सुनकर माँ विस्फारित नयनों से अनु को निहारने लगीं।

आशमा कौल

अपना–अपना भगवान

मीना के घर में प्रति दिन सुबह सवेरे, पूजा के समय ठाकुर जी को भोग लगाया जाता है। उसके बाद ही पति और बच्चों को नाश्ता परोसा जाता है। मन्दिर में भोग लगाते समय मीना की आत्मा संतुष्ट होती है और उसे ऐसा अहसास होता है कि जैसे उसे भगवान मिल गए हों। वहीं दूसरी तरफ की झोपड़–पट्टी में शीला के घर में चूल्हा कभी–कभी जलता है। खाली पेट तो उसे कभी पूजा का ख्याल भी नहीं आता है। जिस दिन उसका पति कुछ कमाकर आटा–दाल ले आता है, उस दिन तो घर में जैसे दीवाली होती है। चूल्हे का धुआँ जैसे उसकी आरती की थाली का धुआँ होता है और पहला भोग वह अपने भूखे मासूम बच्चों को लगाती है। उस आत्म संतुष्टि में ही उसे भगवान मिल जाते हैं।

रेनू शर्मा

माँ का मोल

''देखो जी आपणी इस बूढ़ी ठेरी माँ तांई कह दयो अक मनै घणी ना तंग करै। ना तो थामजाणो सो।''

''दिखे बेटी मैं तो थ्हारे भले खातर किमे बात कहूँ सूं ना तो मेरा के सै।'' भरपाई बेजती का घूँट सा भरकै बोली। भरपाई का पूत रामसिंह दोनुआ की बात पै छौ मैं आकै बोल्या माफ करो मनै, दुखी होग्या थारे इस क्लेश तै। सासू-बहू आपणे काम मैं लैग गी। भरपाई सोचण लागी, के मोल सै इस घर मैं मेरा। बहू आण-पाण तारण लाग गी। अर बेटा भी उसकी होड़ कोणी बडांदा। ना तो जिबेनी बहू नै घुड़क देंदा। भरपाई भीतरो-भीतर घुलण लाग गी।

एक दिन भरपाई पूत तांई बोली अक बेटा साची साची बता इब तेरी नजरां मैं मेरा अर बहू का के मोल सै? छोरा बोल्या–दिखे माँ तू तो मनै सब्जी रोटी बरगी लागै सै, अर बहू हलवे-पूरी बरगी लागै सै। या सुनके भरपाई नै खाट पकड़ ली। तन का रोग तो ठीक हो जाया करै पर मन का रोग ओ भी आपणे कालजे के टुकड़े का दिया होया क्यूकर ठीक होंदा। रामसिंह का बापू भी भरपाई तै पूछ-पूछ कै हैर लिया के मर्ज सै भरपाई। किमे नी बतावै बैस बरल-बरल रौवे। रामसिंह समझ गया अक उनै जो उस दिन माँ का मोल बताया ओ माँ के कालजे मैं कसूता गढ़ गया। रात नै ओ माँ के पाँव दाबता होया बोल्या– आँ री माँ क्यू जी माड़ा कर री सै। तू उस दिन दिखै मेरी बात का डूँगा मतलब कोणी समझी। देखे माँ हलवे पूरी तै मानस दो दिनां मैं ऐ कणतै जै सै, अर रोटी-सब्जी मानस सारी उम्र खावै सै कदे भी कोणी कणतांदा। या सुनकै जणो भरपाई की मरी देही में प्राण घलगे। अर वा बेटे की जाफी भरकै खूब रोई, इब उनै किसी बात का मलाल कोणी था। उती आपणे मोल का बेरा पाटग्या था।

खंड–2

खिड़कियाँ

विष्णु प्रभाकर

ईश्वर का चेहरा

प्रभा जानती है कि धरती पर उसकी छुट्टी समाप्त हो गई है। उसे दु:ख नहीं है। वह तो चाहती है कि जल्दी-से-जल्दी अपने असली घर जाए। उसी के वार्ड में एक मुस्लिम खातून भी उसी रोग से पीड़ित है। न जाने क्यों वह अक्सर प्रभा के पास आ बैठती है। सुख-दु:ख की बातें करती है। नई-नई पौष्टिक दवाइयां, फल तथा अण्डे आदि खाने की सलाह देती है।

प्रभा सुनती है, मुस्कुरा देती है। सबीना बार-बार जोर देकर कहती है, ''ना बहन, मैंने सुना है कि यह दवा खाने से बहुत फायदे होता है और अमुक चीज़ खाने से तो तुम्हारे से खराब हालतवाले मरीज भी खुदा के घर से लौट आए हैं।''

''सच?''

''हाँ, बहन, आजमाई हुई चीज़ें हैं।''

''तुमने खुद आजमाकर देखी है?''

सबीना एकाएक सकपका गई। उसका चेहरा मुरझा गया। एक क्षण शून्य में देखती रही। फिर बोली, ''बहन, हम उन चीज़ों का इस्तेमाल कैसे कर सकेंगे? बहुत महंगी हैं और हम ठहरे झोपड़-पट्टी के रहनेवाले। तुम्हें कितने लोग घेरे रहते हैं। उन लोगों को तो मैंने कई बार देखा है। तुम ये महंगी चीज़ें खरीद सकती हो। शायद तुम्हारे बच्चों के भाग्य से अल्लाताला तुम पर करम फरमा दें।''

प्रभा सुनती रही, सबीना के चेहरे पर एकटक दृष्टि गड़ाए रही। उसे बराबर लगता रहा कि ईश्वर का अगर कोई चेहरा होगा तो सबीना के जैसा ही होगा।

जाति या जान

चकरौता के नीचे एक सुन्दर प्रपात है। अपने एक साथ के साथ वह एक तड़के उसे देखने चला। पहुँचने में कोई कठिनाई नहीं हुई। वह स्थान इतना सुंदर था कि वहाँ से हटने को मन नहीं करता था। चारों ओर हरियाली, पृष्ठभूमि में

पर्वत-शृंखला, कई स्थानों से नीचे आता हुआ प्रपात का फेनिल जल और उससे अठखेलियां करतीं प्रभात की किरणें। रजत-स्वर्णिम इस मृगजाल पर नेत्र जैसे ठिठक-ठिठक जाते थे। जी भरकर घूमा, स्नान किया। जहाँ खतरा था, वहीं उत्फुल्ल सौन्दर्य पाया। प्राण पुलक उठे, लेकिन देखते-देखते सूर्य मध्य रेखा के बहुत पास पहुँच गया। तब लौटने का होश आया। आते समय जो गहरी ढलान थी, वही अब प्राण-लेवा चढ़ाई में बदल गई। कुछ क्षण वह चौकड़ी भरता रहा। फिर सांस फूलने लगी। पैरों ने जवाब दे दिया। स्फूर्ति थकान में बदल गई। जैसे ही एक चढ़ान पूरी होती, दूसरी सिर ऊँचा किए सामने आ खड़ी होती। किसी तरह उसे पार करते तो तीसरी, चौथी, पांचवी सिर उठाती चली जातीं। मध्य तक पहुँचते-पहुँचते शरीर ने जवाब दे दिया। पहाड़ी तीव्र धूप के कारण भयंकर प्यास लग गई, लेकिन आस-पास बस चढ़ाई थी और कुछ नहीं था। प्रपात का स्वर भी सो चुका था और चकरौता की बस्ती कहीं आकाश के पीछे छिपी थी। संकट में साहस सघन हो उठता है। कुछ और आगे बढ़ा। दूर एक खेत में एक कुटिया नज़र आई और अनायास ही पैर उधर मुड़ गए। पास पहुँचते-पहुँचते सांस फूल चुकी थी। किसी तरह चट्टान का सहारा लेकर वह रुका और शरीर का समस्त जोर लगाकर पुकारा-
''कोई है?''

कई क्षण बाद कुटिया में से एक युवक बाहर आया। सिर पर मुंडासा बांधे हुए था। मोटा कुरता और ऊँची धोती बता रहे थे कि यह किसान है। लेकिन मूंछों का कटाव उसके मुसलमान होने की घोषणा भी कर रहा था। उसने हाँफते-हाँफते किसी तरह कहा, ''पानी।''

उस युवक ने उसकी ओर देखा और कहा, ''मैं मुसलमान हूँ।''

''वह बोला, ''तो क्या हुआ?''

उसने कहा, ''होता क्या, मैं तुम्हारी जाति नहीं ले सकता। तुम हिन्दू हो। अपने रास्ते जाओ।''

प्राण जैसे निकलने को हो रहे थे, पर किसी तरह साहस बटोरकर वह फिर बोला, ''भाई, मैं जाति की बात नहीं कर रहा, जान की कर रहा हूँ। तुम जान तो नहीं लोगे। मुझे पानी दो। नहीं तो मैं मर जाऊँगा।''

उसके स्वर में गहरी कड़वाहट थी और वह अपनी झोपड़ी में जाने के लिए मुड़ गया था। चट्टान के दूसरी ओर फूस की टूटी हुई एक और झोंपड़ी थी। उसमें शायद बैल बांधे जाते थे। पुआल बिछा हुआ था। किसी तरह अपने को

खींचकर वह वहाँ तक पहुँचा और गिर पड़ा। गिरते-गिरते बोल, ''मैं यही पड़ा हूँ। देखता हूँ, तुम जाति लेते हो या जान।''

लेकिन वह अपना वाक्य पूरा कर पाता कि देखता है, वह युवक एक हाथ में लोटा लिए वहाँ आ गया है, बोला, ''पहले जरा मुंह धो लो और दो मिनट यहीं लेटे रहो। फिर मैं शरबत ले आता हूँ।''

पश्चात्ताप

भूषण जब प्रिंसिपल के कमरे में आया तब उसके हाथ में तेजाब की एक बोतल थी। आगे बढ़कर उसने उस बोतल को मेज पर रख दिया।

प्रिंसिपल ने दृष्टि उठाकर पूछा, ''क्या है?''

''तेजाब की बोतल।''

''तेजाब की बोतल! क्यों, मैंने तुमसे बोतल लाने को कब कहा था?''

'' जी नहीं, आपने नहीं कहा था।'' भूषण ने कुछ सकपकाते हुए कहा।

''तो फिर क्यों लाए हो?'' प्रिंसिपल ने कौतूहल से पूछा।

''जी, भूषण ने साहस बटोरकर शीघ्रता से जवाब दिया, बोतल को देखा, फिर भूषण को देखा। विश्वास नहीं हुआ। पूछा, ''क्या कहते हो?''

भूषण शान्त हो चुका था। बोला, ''जी, मुझे तेजाब की जरूरत थी, इसलिए एक महीना पहले मैं इसे साइंस-रूम से चुराकर ले गया था।''

प्रिंसिपल साहब का कौतुहल बढ़ता ही जा रहा था। पूछा, ''एक महीना पहले?''

''जी हाँ।''

''लेकिन अब तक इस्तेमाल नहीं किया?''

''जी, कर नहीं सका।''

''क्यों?''

''जी, जब भी करना चाहता था तो दिल कांपने लगता था।''

''फिर क्या होता था?''

''जी, मैं उसे आलमारी में बंद करके रख देता था।''

''फिर?''

''फिर भी मन को शांति नहीं मिलती थी। लगता था, जैसे मैंने कोई बुरा काम किया है।''

प्रिंसिपल ने यन्त्रवत् कहा, ''और शायद इस तरह एक महीना बीत गया?''

''जी हाँ, इसी तरह एक महीना बीत गया, लेकन अब मुझसे रहा नहीं गया। मैं इसे यहाँ ले आया हूँ।''

''मेरे पास क्यों लाए हो? वहीं क्यों नहीं रख दिया, जहाँ से ले गए थे?''

''जी, यह तो एक बार फिर चोरी करना होता।''

प्रिंसिपल का मन जैसे खिल उठा। प्रसन्नता से गद्‌गद् होकर वह बोले, ''बहुत अच्छा! तुमने बहुत अच्छा काम किया है। मैं तुमसे बहुत खुश हूँ।''

यह कहकर वह फिर अपने काम में लग गए, पर भूषण वहीं खड़ा रहा। उन्होंने देखा तो पूछा, ''अब क्या बात है?''

भूषण ने कहा, ''मुझे सजा तो मिली नहीं।''

प्रिंसिपल मुस्कुराए। बोले, ''एक महीने तक तुम पछतावे की आग में जलते रहे हो, वही क्या कम सजा है, जो मैं तुम्हें और दूं?''

यह कहकर वह फिर पहले की तरह अपने काम में लग गए।

रमेश बत्तरा

सूअर

वे हो-हल्ला करते एक पुरानी हवेली में जा पहुँचे। हवेली के हाते में सभी घरों के दरवाजे बन्द थे। सिर्फ एक कमरे का दरवाजा खुला था। सब दो-दो, तीन-तीन में बँटकर दरवाजे तोड़ने लगे और उनमें से दो जने उस खुले कमरे में घुस गए।

कमरे में एक ट्रांजिस्टर हौले-हौले बज रहा था और एक आदमी खाट पर सोया हुआ था।

''यह कौन है?'' एक ने दूसरे से पूछा।

''मालूम नहीं'', दूसरा बोला, ''कभी दिखाई नहीं दिया मोहल्ले में।''

''कोई भी हो'', पहला ट्रांजिस्टर समेटता हुआ बोला, ''टीप दो गला!''

''अबे, कहीं अपनी जाति का न हो?''

''पूछ लेते हैं इसी से।'' कहते-कहते उसने उसे जगा दिया।

''कौन हो तुम?'' वह आँखें मलता नींद में ही बोला, ''तुम कौन हो?''

''सवाल-जवाब मत करो। जल्दी बताओ वरना मारे जाओगे।''

''क्यों मारा जाऊँगा?''

''शहर में दंगा हो गया है।''

''क्यों...कैसे?''

''मस्जिद में सूअर घुस आया।''

''तो नींद क्यों खराब करते हो भाई! रात की पाली में कारखाने जाना है।''

वह करवट लेकर फिर से सोता हुआ बोला, ''यहाँ क्या कर रहे हो?''....जाकर सूअर को मारो न!''

नौकरी

बॉस का मूड सुबह से ही उखड़ा हुआ था, वह बात-बात पर दाँत पीस रहा था। और सिर्फ बाबू रामसहाय के अलावा, मैनेजर से लेकर चपरासी तक के साथ खासी डाँट-डपट कर चुका था। सभी बौखलाए से बैठे थे।

दोपहर के बाद बॉस के कैबिन में जाकर बिना उसकी अनुमति के उसके सामने बैठ गया, ''दोपहर की राम-राम जनाब!''

''हाँ! तो क्या समाचार हैं आज ऑफिस के?''

''जी, मैनेजर ने सरेआम कहा कि बॉस अहमक है, गलतियां खुद करता है और दोष हमें देता है...नालायक।''

''हूँ....।''

''अकाउंटेण्ट ...साला मुनीम...कह रहा था...बॉस खुद खाता है तो हमें क्यों नहीं खाने देता? ज्यादा बनेगा तो सारी पोल खोल दूँगा बच्चू की।''

''हुम्म!''

''हैडक्लर्क कह रहा था...कमीना, आज बीवी से लड़कर आया लगता है, इसलिए चिड़चिड़ा रहा है।''

''तुम्हारा क्या ख्याल है?''

''जी, दरअसल छोटी उम्र में इतनी तरक्की कर जाने की वजह से लोग आपसे ईर्ष्या करते हैं।''

''ये सब कामचोर हैं, मेहनत करें तो तरक्की क्यों न हो!''

''जी, एक दिन मैंने एस.डी.ओ. को ताना मारा तो जने-जने को कहता फिरा कि आपकी तरक्की में आपकी पत्नी का बहुत बड़ा हाथ है।''

''उसकी यह मजाल! बास्टर्ड! नानी याद करवा दूंगा उसे!''

''कमीने लोग कहते हैं बॉस, इनसे मुंह लगने में अपनी ही हेठी है... आप खुद समझदार हैं। दुनिया ने सीता माता को भी नहीं छोड़ा।''

''ठीक है। तुम जरा ध्यान रखा करो।''

वापिस पहुँचने पर बाबू रामसहाय से उसके साथियों ने पूछा-''क्यों भई, क्या रहा?''

''कुछ नहीं!'' बीच ब्रांच में खड़े बाबू रामसहाय ने बॉस के कमरे की ओर मुंह उठाकर कहा- ''हरामी सठिया गया है...मरेगा।''

स्वाद

हीरा और मोती दो भाई हैं। वे देश में थे तो थोड़ी-बहुत खेती-बाड़ी करते थे। मगर आज़ादी के बाद वे हाड़-तोड़ मेहनत के बावजूद लगातार गरीब होते गए। इसलिए अब एक जमाने से परदेश में रहकर रिक्शा खींचते हैं। वे सुबह छह बजे अंग-संग निकलते हैं और दिन-भर चाहे कहीं भी क्यों न रहें, रात को दस बजे के आसपास घण्टाघरवाले ढाबे पर आ मिलते हैं।

हमेशा की तरह वे उस दिन भी मिले तो मोती अपनी रिक्शा पर ही बैठा हीरा की प्रतीक्षा कर रहा था। हीरा आया तो रिक्शा से उतरते ही बोला, ''चल मोती,

आज देशी घीवाले होटल में खाना खाएँगे...बढ़िया दिहाड़ी हो गई है अपनी।''

''तुम खा लो भैया'', मोती बोला ''मैं आज नहीं खाऊँगा।''

''क्यों नहीं खाएगा?'' हीरा परेशान हो उठा, ''तबियत तो ठीक है?''

''झूठ बोलता है।'' हीरा ने उसका माथा छूने के बाद नब्ज टटोलकर कहा, ''कुछ खा-पी लिया है?''

''न, वही बस सुबह खाया था।''

''दोपहर को कुछ नहीं खाया?''

''मन ही नहीं हुआ कुछ खाने को।''

''चाय तो नहीं पी ली ज्यादा?''

''न, एक कप भी नहीं पिया।''

हीरा हैरान होने लगा कि मोती तो साला ग्राहक छोड़कर भी ठीक दस बजे ढाबे पर आ बैठता है। फिर आठ-दस रोटियां झटकरकर ही दम पड़ता है पट्ठे में। और आज इसने दोपहर से कुछ नहीं खाया, फिर भी! असमंजस में पड़ा वह बड़े भाई की हैसियत से बोला, ''देख मोती, गफलत न कर। जरूर तेरी तबियत खराब है। तू चल डॉक्टर के पास।''

''मुझे कुछ नहीं हुआ भैया, हट्टा-कट्टा हूँ...कहो तो अभी ले चलूँ रिक्शा दस कोस तक एक ही सांस में।''

''फिर खाना क्यों नहीं खा रहा? चल, सीधे-से खा ले, नहीं तो मैं भी नहीं खाऊँगा।''

''जिद मत करो भैया, तुम खा लो।'' मोती भावावेश में कह गया, ''मैं तो यों नहीं खा रहा कि स्वाद बिगड़ जाएगा।''

''अच्छा तो माल खाकर आया है अकेले-अकेले और स्वाद ले रहा है अब तक?'' हीरा ने शिकायत के लहजे में पूछा, ''क्या खाया तूने, बता दो?''

''बात यह है भैया'', लाचार मोती मानो किसी मीठी याद में डूबता हुआ बोला, ''सुबह एक व्यापारी अपना टिफिन रिक्शा में भूल गया। पहले तो मैं घंटा-भर वहाँ खड़ा रहा कि शायद वह वापिस आ जाए। पर कोई नहीं आया तो मैंने टिफिन खोलकर देखा...घर का खाना था। मुझसे रहा नहीं गया। सारा चट कर गया। क्या स्वाद था भैया...तब से कुछ खाने को जी ही नहीं कर रहा है...''

हीरा पल-भर तो मोती की खुशी में आत्मविभोर-सा हो गया, लेकिन फिर सहसा बड़े रुआंसे स्वर में डाँटते हुए बोला, ''पर तूने आधा मेरे वास्ते क्यों नहीं रखा बेवकूफ!''

पूरन मुद्‌गल

गठबंधन

लकड़ी का पूरे आकार का घोड़ा बीचों बीच दो भागों में विभक्त। दोनों भाग यंत्र चालित। एक भाग में घोड़े का सिर, अगली दो टांगे और आधी पीठ जिस धर्म गुरु सवारी थोड़ी दूर पीछे खड़े दूसरे भाग पर एक अन्य व्यक्ति सवारी के लिए तत्पर।

राजमार्ग पर खड़े एक पथिक ने धर्मगुरु को नमन कर अपनी हैरानी प्रकट की, यह क्या! आप असली घोड़े की सवारी क्यों नहीं करते!'

'क्या आप इस प्रकार सवारी करते लोगों के उपहास का पात्र नहीं बनते?' पथिक ने साहस बटोरा।

'इस देश में धर्म का उपहास करने का साहस किसमें है? कनफटे, भस्म रमाए और दिगम्बर साधुओं के आगे लोगों को श्रद्धानत होते देखा है न है तुमने!'

निरूत्तर पथिक पूछ बैठा, 'यह दूसरे आधे घोड़े पर सवार व्यक्ति कौन है?'

''तुम अपने देश के राजा को नहीं पहचानते! वह इस राज्य का स्वामी है। वह जन में व्याप्त असंतोष को दूर करने के लिए भविष्य के सुंदर सपनों का सृजनकर्त्ता है। उन्हें साकार करने में वचन देता है। केवल वचन।' कड़वी हँसी हँसते हुए धर्मगुरु ने अपना घोड़ा आगे बढ़ाया। तब तक राजा का घोड़ा निकट आते देख पथिक ने शीश झुकाकर राजा का अभिवादन किया। घोड़ा रुका तो पथिक ने विनम्रतापूर्वक पूछा, अभी अभी जो कुछ कहा उससे स्पष्ट है कि उनके प्रति किए गए कार्यों से वह संतुष्ट नहीं है।

'धर्मगुरु स्वयं को देश और राजा से ऊपर समझता है। विडंबना यह है कि जन भी यही मानने लगा है।'

'हम तो जन को सर्वोपरि मानते हैं। जनगण के कल्याण के लिए पूर्णतः समर्पित हैं। राजा ने अपनी उंगली के स्पर्श से यंत्रचलित घोड़ों को गति दी।

पथिक ने देखा कि धर्मगुरु जिस मार्ग पर जा रहा था राजा का घोड़ा भी उसी ओर बढ रहा है। धर्मगुरु जहाँ खड़ा था राजा ने भी अपना घोड़ा ठीक उसके पीछे खड़ा कर दिया। तभी वहाँ नियुक्त एक राजकीय अभियंता ने दोनों

घोडों को जोड़ दिया। अब एक बचे घोड़े पर साथ-साथ बैठे धर्मगुरु तक राजा गंतव्य की ओर बढ़ चले।'

जुनून

भौं-भौंड भौंड भौं-भौंड...

-इसे रोको काट खाएगा।

-यह काटेगा नहीं, यह पगला गया है।

-क्या मतलब?

-तीन दिन पहले दंगाई इसके मालिक का वध कर गए थे।

-फिर?

-यह तभी से बार-बार खाली घर के चक्कर काट कर गली में आ जाता है और भौंकता रहता है। न कुछ खाता-पीता है, न इसने किसी को काटा है।

-लेकिन पागल कुत्ता वो काटता है लोगों को।

-बताया तो, वैसा पागल नहीं है यह, सूंघ कर देखता है सबको। सही हत्यारा को ही काटेगा। आदमी थोड़े न है जो दंगा छिड़ने पर किसी निरपराध को इसलिए मार दे कि वह दूसरे मज़हब का है।

भगवान प्रियभाषी

सबसे अच्छी गेहूँ

कृषि विश्वविद्यालय के स्नातकों का एक दल क्रियात्मक प्रशिक्षण के लिए गाँव में आया हुआ था। खेतों की मेंड पर लम्बे बालों वाले चश्मे लगाए और बेल-बॉटम पहने अपटुडेट युवकों को देखकर गाँव के कुछ लोग भी उनके आसपास एकत्र हो गए थे। प्रशिक्षक के हाथ में पाँच-छह किस्म की गेहूँ की बालियां थीं और वो बता रहे थे।

ये तीन सौ सत्तावन किस्म का गेहूँ है। ये कल्याण है। ये देसी...इसके गुण...अवगुण....इतना बीज...इतना पानी, खाद...बोने का समय...काटने का समय आदि। नवयुवक बहुत ध्यान से देख-सुन रहे थे। भीड़ में फुसफुसाहट-सी होने लगी थी—''अरे, यो पढ़ावै सै, यो तो म्हारा नत्थू भी जानै सै जो गूंठा भी न टेकणा जाणै...।'' तभी प्रशिक्षक ने प्रश्न उछाला, यह सब कुछ जान लेने के बाद...कौन-सी गेहूँ को आप सबसे अच्छी गेहूँ मानेंगे?

प्रशिक्षणार्थियों में कानाफूसी शुरू हो गई। वो तय नहीं कर पा रहे थे। सभी में कुछ गुण थे तो कुछ कमियां भी थीं। काफी देर हो गई, तभी एक बूढ़ा खेतिहर मजदूर फटे चिथड़ों में लिपटा एकाएक आगे बढ़ा और चिल्लाता हुआ-सा बोला, ''मैं काऊं साब?'' सभी निगाहें उसकी ओर उठ गई थीं। संयत होता हुआ वह बोला, ''वोई (गेहूँ) सबतै बड़िया होवै जिस तई दो जून पेट भरजै।'' और बिना किसी की ओर देखे बोझिल कदमों को उठाता वह एक ओर बढ़ गया।

सत्यबोध

''सेठ जी! पांचेक सौ रुपये की जरूरत थी।''

''वो पहले के दो हज़ार का क्या हुआ जो तुम्हारे पिताजी ने लिए थे?''

''इस बारे में आप उन्हीं से बात करें।''

''पर रुपया लगा तो तुम्हारी पढ़ाई पर ही था।''

''यह उनकी गलती थी।''

''गलती थी या कुछ भी...मैंने तो रुपये दिए थे! खैर छोड़ो ...तुम्हें क्या

जरूरत आन पड़ी?''

''कोई छोटा-मोटा काम करूंगा।''

''रहन रखने के लिए क्या लाए हो?''

''मेरे पास तो सिर्फ मेरा विश्वास है।''

''तुम्हारे विश्वास पर पांच सौ रुपये?''

''आप मेरी डिग्रियां गिरवी रख सकते हैं।''

''ये कागज़ दो रुपये किलो बिकते हैं।''

''ये मेरी मेहनत का फल है।''

''रुपये भी, बरखुरदार, पेड़ों पर नहीं लगते।''

''मैंने इन्हें पाने के लिए तपस्या की है।''

''तो जिनके लिए तपस्या की है, रुपये भी उन्हीं से उधार लो...इतने साल बेकार गंवा दिए....मेरी दुकान पर काम शुरू किया होता तो आज चार सौ रुपये के आदमी होते।''

निरुत्तर-सा वह निराश होकर घर की तरफ चल दिया....यह बात उसके सोचने की नहीं...पिता के सोचने की थी। पर वो उसे न पढ़ाते तो.. ? उसे लगा कहीं-न-कहीं कोई बड़ी गलती अवश्य है..भविष्य के लिए उसे खुद सोचना होगा...पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक ही गलती अब वह नहीं करेगा।

अशोक भाटिया

नमस्ते की वापसी

कालोनी की यह गली नंबर पांच है। बाकी गलियां भी इस जैसी हैं। इन घरों के सब आदमी भी एक जैसे। दुकान-दफ़्तर से आए, खाया-पिया टी.वी. देखा और सो गए। न दीन के न ही दुनिया के। लेकिन आस-पड़ोस को लेकर एक मामले में चौकन्ने। अब इस गली के कुमार को ही लीजिए। कल तक कुमार अपने पड़ोसी श्रीलाल को अदब के साथ नमस्ते किया करता था। उम्र और ओहदे को सलाम किया ही जाता है। लेकिन जब से कुमार के पिता चल बसे हैं, उसके हिसाब-किताब भी बदल गए हैं। पहले तो कुमार ने अपने घर की जर्जर रसोई को शानदार बनवाया। इसके साथ उसकी गर्दन थोड़ी तन गई और पड़ोसी श्रीलाल को रोज़ मिलने वाली नमस्ते ढीली पड़ गई। कई बार वह नमस्ते न के बराबर, मरियल-सी होती। कुमार ने आगंन में मार्बल लगा लिया, घर का मुँह-माथा भी संवार लिया। फिर क्या था। कुमार ने श्रीलाल को नमस्ते करनी बंद कर दी। श्रीलाल को माजरा समझ आ गया था, लेकिन उसे रोज़ की एक नमस्ते कम हो जाने का बड़ा दु:ख था।

श्रीलाल का अपना मकान जर्जर हालत में था। पड़ोस की कोठी के तरोताज़ा हो जाने के बाद श्रीलाल का मकान और भी खस्ताहाल दिखाई देता था। दीवारों पर से सीमेंट की गिरती हुई पपड़ियां मानो घर की हालत पर आँसू बहाती थीं। जब पूरा परिवार ही श्रीलाल के पीछे पड़ गया तो, मजबूर होकर उसने सारे घर को संवार दिया। दरवाज़े पर नई कार भी टिका दी। उसे अपना घर कुमार के घर से अधिक सुंदर लगने लगा था; और कार तो बोनस के नंबर थे। इसका कुमार पर क्या असर पड़ा है—श्रीलाल यह जानने को बेचैन था।

आख़िर कुछ दिन बाद उसे असर दीख भी गया। जब कुमार का सामना श्रीलाल से हुआ, तो कुमार ने उसे एक करारी नमस्ते ठोक दी। ऐसा लगा जैसे सदियों से वह नमस्ते कुमार के जिगर में अटकी हो और बाहर आने का मौका तलाश करती रही हो। श्रीलाल ने भी उस लापता हो चुकी नमस्ते को दोनों हाथों से लपका, रूमाल से साफ़ किया और जेब में बड़े ध्यान से रख लिया।

नमस्ते करके कुमार हारे हुए जुआरी की तरह गर्दन झुकाकर अपने घर में घुस गया। इधर श्रीलाल की गर्दन में मानो जिराफ़ की आत्मा प्रविष्ट हो गई थी।

रामकुमार आत्रेय

और कौवा रो पड़ा

हंस और हंसिनी यात्रा पर थे। बीच राह में रात हो गई। वे दोनों एक कौवे के यहाँ रुक गए। हंसिनी बहुत सुंदर थी। कौवा उसे पाने के लिए ललचा उठा। वह स्वभाव से ही बदमाश था। उन दिनों उसकी पत्नी अपने मायके गई हुई थी। उसने मन ही मन एक षड्यंत्र रच डाला। सुबह होते ही हंस जब यात्रा पर आगे जाने के लिए तैयार हुआ तो उसने कौवे से निवेदन किया कि वह उसकी पत्नी को भीतर से बुला दे। कौवे ने क्रूरतापूर्वक उत्तर दिया कि हंसनी तो उसकी पत्नी है। इसलिए यदि हंस को आगे यात्रा पर जाना है तो मज़े से चला जाए। कौवे ने भीतर की कोठरी की सांकल लगाकर उस पर ताला ठोंक दिया था।

हंस बहुत दुखी हुआ। वह तुरंत गाँव की पंचायत के सदस्यों के यहाँ गया। उसने उनसे प्रार्थना की कि वे कौवे से उसकी पत्नी को दिलवा दें। उसे पूरा विश्वास था कि पंचायत उसके साथ पूरा न्याय करेगी। क्योंकि पंचों में परमेश्वर का वास होता है।

पंच एकत्रित हुए। हंस ने अपना पक्ष रखा। उसने तर्क दिया कि हंसनी उसकी पत्नी है। कौवा तो बदसूरत और काला है। जबकि हंसनी ख़ूब गोरी और सुंदर है। उसकी जोड़ी हंस के साथ बनती है। पंचायत चाहे तो हंसनी को बुलाकर पूछ ले कि हंसनी किसकी पत्नी है? कौवे की पोल अपने आप खुल जाएगी। इस संबंध में जब कौवे से पूछा गया तो उसने कहा कि हंसनी उसकी पत्नी है और दो साल से वे दोनों पति-पत्नी के रूप में साथ रह रहे हैं। रही बात हंसनी से पूछताछ की, तो पंचायत को मालूम ही है कि इज़्ज़तदार घरों की औरतें अदालतें और पंचायतों के चक्कर नहीं काटा करतीं।

पंचायत सदस्यों ने थोड़ी देर विचार-विमर्श करके अपना फैसला सुनाया कि हंसनी हंस की नहीं बल्कि कौवे की पत्नी है। सदस्यों का कहना था कि स्वयं उन्होंने दो वर्ष से कौवे और हंसिनी को एक साथ रहते देखा है। उसे धमकाया गया कि यदि वह वहाँ से चुपचाप नहीं गया तो उसकी पिटाई करके उसे वहाँ से खदेड़ दिया जाएगा। हंस को वहाँ से चुपचाप चले जाने के आदेश सुना दिया गया।

कौवे और हंसिनी की जोड़ी न मिलने की बात पर पंचायत का कहना था कि इस दुनिया में सही जोड़ी तो किसी की भी नहीं मिलती। पति खूबसूरत होगा तो पत्नी बदसूरत और यदि पति बदसूरत हुआ तो पत्नी निश्चय ही खूबसूरत होगी।

हंस को वहाँ से चले जाने के बाद कौवा अचानक ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा।

उसको रोता देखकर पंचायत के सदस्य आश्चर्यचकित हो उठे। उनमें से एक ने कौवे से पूछा, ''अरे भाई, अब तो तुम्हारे हक़ में फैसला हो चुका है। अब तुम क्यों रोने लगे?''

''श्री मान जी, जब आप जैसे पंचायत के सदस्य मर जाएंगे तो ऐसा फै सला कौन करेगा!'' कौवे ने रोते-राते कहा।

दूसरा जल्लाद

''आओ मेरे पास लेटो...मैं कब से तुम्हारा इंतज़ार कर रहा हूँ।'' काम निपटाकर कपड़े से हाथ पोंछती औरत को देखकर मर्द ने बिस्तर पर उसके लेटने के लिए जगह बनाते हुए कहा।

मर्द के स्वर में मनुहार थी। आज वह बेहद तनाव में था। औरत के लिए तनाव हल्का करने की एक रामबाण दवा थी।

''नहीं, जी, आज मैं बच्चों के साथ दूसरी कोठरी में सोऊंगी।'' औरत ने हाथ पोंछने वाला मैला कपड़ा बराबर की खूंटी पर टांगते हुए उत्तर दिया।

''क्यों? क्या तुम्हें मेरे पास लेटना अच्छा नहीं लगता?'' मर्द अधलेटा होने की स्थिति में आ गया था, उसकी नज़रें औरत के चेहरे पर टिकी हुई थीं।

''बच्चे कुछ डरे हुए हैं।'' औरत के स्वर में कुछ झिझक थी।

''डरे हुए हैं? किससे और क्यों?''

''आज जब आप घर में घुसे थे, बच्चे टीवी देख रहे थे। तब आपने उन्हें टोका था। टोका तो प्यार से ही था, पर फिर भी वे आपको देखकर ही डर गए थे। इसलिए दूसरी कोठरी में जाकर लेट गए थे। अब तो वह वहाँ सोए पड़े हैं। वे दोनों रात में फिर से डरकर उठ सकते हैं।'' औरत ने मर्द के साथ न सो पाने के कारण की व्याख्या कर डाली।

''मैं समझा नहीं। ऐसा मैंने क्या कह दिया? क्या कर दिया?'' मर्द नहीं उसकी चिंता बोल रही थी।

''बुरा मत मानना जी, एक बात कहूँ?''

''कहो, जो भी कहना चाहती हो।''

''सच कहूँ जी, डर तो आज मैं भी रही हूँ। पीते तो कभी-कभी आप पहले से ही हैं पर आज आप की मूंछें खून के प्यासे किसी खांडे जैसी लग रही है। चेहरा भी कुछ बदल-सा गया है, एकदम पत्थर जैसा। आँखें भी बड़ी-बड़ी और चौड़ीसी लग रही हैं, किसी ख़ौफ से भरी हुई-सी। आवाज़ में प्यार की नरमाई की जगह, गुस्से की उबाल जैसी कोई चीज़ भरी हुई है जी। बच्चे डरते-डरते मुझसे कह रहे थे कि आज आपका चेहरा किसी जल्लाद जैसा लग रहा है। हालांकि जल्लाद न तो कभी उन्होंने देखा है और न ही मैंने। फिर भी टीवी देख--देखकर वे सबकुछ समझने लगे हैं।'' औरत के क़दम दूसरी कोठरी में जाने के लिए घूम चुके थे पर उसकी निगाहें अब भी अपने पति के चेहरे पर टिकी हुई थी, भयभीत हिरणी जैसी।

मर्द हड़बड़ाकर बिस्तर से नीचे कूदा और लगभग दौड़ता हुआ सा शीशे के पास जा पहुँचा। वह शीशे में अपने चेहरे पर आए बदलाव को जांचने की कोशिश कर रहा था। वास्तविकता यह थी कि आज दिन में उसने अपनी खाप की एक महत्वपूर्ण सभा की प्रधानता की थी। खाप की एक युवती ने एक अन्य जाति के युवक के साथ चुपचाप शादी कर ली थी। उस दर्द की प्रधानता में खाप की सभा ने उस युवक-युवती को कत्ल कर दिए जाने का फरमान जारी कर दिया था। वैसे मर्द ने यह बात अभी तक औरत को नहीं बताई थी।

औरत सहमी हुई-सी मर्द को शीशे के सामने खड़ा देख रही थी।

मधुदीप

हाँ मैं जीतना चाहता हूँ

'आओ, ज़िन्दगी से कुछ बातें करें!' हाँ, अनुपम खेर ने एक टीवी विज्ञापन में यही तो कहा था।

वह भी पिछले साठ साल से अपनी ज़िन्दगी से बातें करता रहा है मगर ज़िन्दगी ने जैसे उसकी बातें कभी सुनी ही नहीं।

उसने अपने बचपन से बातें की थीं। सफेद कमीज और पतलून पहनकर क्रिकेट का बल्ला घुमाने की बातें मगर जिन्दगी ने उसकी बातें सुनने की बजाय उसके पिता की बातें सुनीं और उसे फुटबाल का खिलाड़ी बना दिया। हासिल रहा शून्य।

बचपन से युवावस्था आने तक वह अपनी जिन्दगी से फुसफुसाहटों में बातें करता रहा। यह जिन्दगी से सपनों की बातें करने का समय था। उसने जिन्दगी से प्राध्यापक बनने के सपने की बात की मगर यहाँ भी जिन्दगी ने उसकी बजाय नियति की बातें सुनी। पिता के अचानक अवसान के कारण वह भारत सरकार में एक अदना-सा लिपिक बनकर रह गया।

उसके बाद अब तक वह जिन्दगी से बतियाने और उसे अपनी सुनाने का भरसक प्रयास करता रहा मगर जिन्दगी ने जिस अन्धी दौड़ में उसे धकेल दिया था उसमें उसे ठहरकर इत्मीनान से बातें करने का मौका ही नहीं मिला। घर, परिवार, बच्चे और उन सबका दायित्व...वह जिन्दगी से कब अपने मन की बात कह सका! कब अपनी बात उससे मनवा सका। वह बस हारता ही तो रहा।

आज वह सेवा-निवृत्त हो रहा है। कार्यालय से उसे विदाई की पार्टी दी जा रही है। अभी एक अधिकारी ने उसके सेवाकाल की प्रशंसा करते हुए यह जानने की जिज्ञासा जताई है कि वह आगे क्या करना चाहता है।

''मैं जिन्दगी से खुलकर बातें करना चाहता हूँ। सिर्फ बातें करना ही नहीं चाहता, जिन्दगी से अपनी बातें मनवाना भी चाहता हूँ। हाँ, मैं जीतना चाहता हूँ।'' बस, इतना ही कह सका है वह और उसने अपने दोनों हाथ जोड़ दिए हैं।

मुआवज़ा

प्रेमपाल दस वर्ष बाद अपने मित्र महासिंह हसे मिलने गाँव आया है। इन दस वर्षों में गाँव में बदल चुका है। हाई-वे और गांव के बीच पहले जहाँ हरे-भरे खेत पसरे रहते थे वहाँ अब धुआँ उगलती चिमनियों वाले कारखाने खड़े हैं।

गाँव का बाज़ार भी अब कस्बे का बाज़ार बन गया है। चौधरी न्यादरासिंह का विशाल तीन-मंजिला हवेलीनुमा मकान बाज़ार के नुक्कड़ से ही दिखाई देता है। इसकी अपनी अलग ही शान रही है। अब यह तो सोचने और समझने की बात है कि इस हवेली से चौधरी न्यादरासिंह का रुतबा है या फिर चौधरी न्यादरासिंह से इस हवेली की ऐंठ है। मगर यह हवेली इतनी बदरंग क्यों दिखाई दे रही है! महासिंह तो अपनी हवेली, अपने गाँव और उसकी समृद्धि की बड़ी-बड़ी बातें खतों में लिखता रहा है, फोन पर बताता रहा है।

सामने तख्त पर एक बुजुर्ग बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं।

''ताऊ, राम-राम...!'' प्रेमपाल आगे बढ़कर उनके पाँव छूता है।

''कौन...? अरे, प्रेमपाल बेटा तू! कब आया रे!'' उनकी अनुभवी आँखें जल्दी ही प्रेमपाल को पहचान गई हैं।

''बस, सीधा आ रहा हूँ, ताऊ। महासिंह कहाँ है...?''

''अब के बताऊँ बेटा..!''

''क्यों ताऊ, सब ठीक तो है।'' वह थोड़ा शंकित हो उठता हूँ।

''अब के ठीक और के गलत!'' चौधरी साहब शायद बहुत कुछ कहना चाहते हैं मगर कह नहीं पा रहे हैं।

अन्दर से ठहाकों की आवाज़ें आ रही हैं। प्रेमपाल की निगाहें उधर उठ गई हैं...प्रश्नभरी निगाहें।

''हाँ बेटा। वो अन्दर बैठक में लफंगे दोस्तों के साथ बैठे जुआ खेले है... इंग्लिश की बोतल भी हैगी...'' वे विक्षोभ से कहते हैं तो प्रेमपाल चौंकता है।

''क्या कहो हो ताऊ! महासिंह तो ऐसा...'' प्रेमपाल अपनी बात पूरी नहीं कर पाता।

''कसूर महासिंह का ना है बेटे!''

''तो...?''

''गोरमिंट ने म्हारी जमीन ले ली....हम बर्बाद हो गए बेटे!''

''मुआवजा तो तगड़ा...''

''वो मुआवाजा ही तो नाश की जड़ बन गया बेटा! पहले किस्से ने इतना पईसा देख्या ना था! करने को कुछ बचा ना था और दौलत बेशुमार, यह तो होना ही था... और फिर धरती बिके का पईसा आज तक किसी को फला है...?''

ताऊ न्यादरासिंह हाँफने लगे हैं। एक पश्न वहाँ टंग गया है। अन्दर बैठक से ठहाकों की तेज़ आवाज़े आ रही हैं। प्रेमपाल के पांव अन्दर बैठक की तरफ जाने को उठ नहीं पा रहे हैं।

तारा पांचाल

मान्यताएं

पण्डित जी चन्द्र ग्रहण का कारण राहू-केतु का चन्द्रमा पर कुपित होना बतला रहे थे और पिता जी बड़े ध्यान से सुन रहे थे। जब उनका व्याख्यान बन्द नहीं हुआ तो मुझसे रहा नहीं गया। मैंने कहा, ''पण्डित जी, चन्द्र ग्रहण तो....''

''बस-बस, मैं जानता हूँ, तुम अंग्रेजों वाली वही घिसी-पिटी किताबों की बात करोगे कि सूरज यूँ होता है धरती यूँ होती है'' उसने मेरी बात बीच में ही काट दी थी, वे फिर बोले, ''सारा देश अंग्रेजों के बहकावे में आकर नास्तिक हो गया है। बेटे, सूरज, चान्द, पृथ्वी, राहू-केतु, ये सब तो हमारे देवता हैं'' उसने प्रकाण्ड पण्डित की सी मुद्रा बनाई है।

''पण्डित जी, आप कौन से जमाने की बात कर रहे हैं- आदमी चान्द पर पहुँचकर वापिस भी आ चुका है और...''

''उन अंग्रेजों की....'' उसने मेरी बात फिर काटते हुए एक गाली दी है, ''बकवास...सब बकवास।''

''आज तक भीम के फैंके हाथी (महाभारत) तो वापिस धरती पर गिरे नहीं और उनका जहाज़ चान्द पर से वापिस आ गया? झूठे-मक्कार कहीं के।'' उसने घृणा से मेरी ओर देखा है। मैं वहाँ से उठ गया था।

बँटवारा

माँ के हाथ-पैर अभी चलते हैं...बाप खाट का होके रह गया है। एक आँख पर हरी पट्टी बंधी है। थोड़ा सा बतियाते ही सांस फूलने लगती है खांसी जोर पकड़ती है आँखों से गन्दला पानी बहने लगता है। बुढ़िया की सेवा टहल से किसी तरह सांस अटके हुए हैं।

दो बेटे हैं-बड़ा किसान, छोटा कान्सटेबल, दोनों आज अलग हो रहे हैं। दहलीज़ में पंचायती जुड़े हैं...फैसले के लिए।

ज़मीन, जायदाद सब का बँटवारा। गऊ, बैल या ऐसा सामान, जिसे छोटा शहर नहीं ले जा सकता, उसकी कीमत लगा ली गई। ले-देकर सब सुलझ गया। अनसुलझा सवाल—मां-बाप का। दोनों इनसे बचने की कोशिश में....

आनाकानी, टालमटोल करने लगे। छोटे ने कहा– मां मेरे पास रह लेगी। बड़े की ज़िद है– नहीं मां को तो मैं ही रखूंगा....।

फैसले की बाट में बैचैन बूढ़ा खाट पर बैठा-बैठा हुक्का गुड़गुड़ा रहा है। बुढ़िया देहरी के पास बैठी तिनके से लाईनें खींच रही है, पर सवाल एक ही है– कौन सा बेटा दोनों को ही रखेगा...छोटा या बड़ा।

मामला निबटता न देख कर एक पंचायती ने पर्ची डालने की सलाह दी। जिस पर मां की पर्ची आएगी वह मां को और दूसरा बाप को रखेगा। दोनों ने हामी भर ली। मां बाप दोनों ने सुना कि उन्हें अलग होना पड़ेगा...अब इस उमर में। मैली आँखों में दोनों बेटों के पालने का इतिहास दीये की पीली रोशनी में तैर गया। बूढ़े ने हुक्के में ज़ोर से सांस खींची, धुआं फेफड़ों में भरता गया। खांसी का दौरा, बुढ़िया का लाईनें खींचता, तिनके बाला हाथ कांपा और सभी लाईनें गड्डमड्ड हो गईं।

प्रेमसिंह बरनालवी

देवता बीमार है

गरीबदास की डेरे के मंहत सेवादास पर बड़ी श्रद्धा थी। नेम से दसौंध (आय का दसंवा भाग) देता। नई फसल पहुँचाता और साल में एक बार जरूर महंत जी को घर बुला कर जी जान से सेवा टहल करता। हैंडपंप की बजाए दूर पिपली वाले कुंए से नंगे पांव पानी ले कर आता। (क्योंकि तब हैंडपंप में चमड़े की बोकी होती थी।)

निश्चित दिन से पहले गरीबदास महंत जी के डेरे उन्हें आने की याद दिलाने गया तो भूमिगत कुटिया के द्वार पर भीतर का वार्त्तालाप सुनकर ठिठक गया।

महंत, 'सेठ जी, कोई और दिन रख लीजिए, कल हम अपने परम भगत गरीबदास के घर जाएंगे। क्या करें, पुराना सेवक जो ठहरा।

'महाराज, मजबूरी है। मैं इतने लोगों से आपके पधारने की बात कह चुका हूँ..इस विश्वास से कि आप मेरी बात रखेंगे। न आये तो बिरादरी में मेरी भद्द होगी। फिर क्षण रुक बड़े नोटों की एक गड्डी आगे रख कहा, 'महाराज ये लो पेशगी... बस सेवक की तुच्छ सी भेंट। बाकि जो भी बन पड़ा, खुशी-खुशी करूँगा। फिर वहाँ बड़े-बड़े दानी मानी और खासकर एन. आर.आई सज्जन...।''

यह सुन महंत कुछ नर्म पड़ते बोले,'' भाई सेवादास तो सेवा, श्रद्धा और विश्वास का भूखा है। जब आप इतना यकीन कर आ ही गये तो...अच्छा हम तुम्हारा मान रखते हैं...''

सेठ के जाते ही शिष्य ने पूछा,'' पर महाराज गरीबदास को...?

'कहला भेजना...कि...'

'आपकी तबीयत ठीक नहीं...''

शिष्य ने नोटों की गड्डी संभालते गुरु से कहा।

महंत जी मंद-मंद मुस्काये ''हूँ'' और ध्यान में लीन हो गये।

कमला चमोला

देश दिल्ली

दिल्ली देश की नब्ज़ है– दिल्ली दुरुस्त, दिल्ली हंडिया का चावल है– वो पका देश पका, दिल्ली थर्मामीटर का पारा है– वो चढ़ा देश चढ़ा, खैर-किस्सा ये है, देश संकट के दौर से गुजर रहा था, राजधानी दिल्ली में टमाटर चालीस रुपया किलो पार चले गए थे, बिना लाल टमाटर दिल्ली वालों के चेहरे लाल भभूखा हो रहे थे, यूँ देश के अधिकांश हिस्सों में टमाटर यही रेट चल रहे थे पर क्योंकि वे दिल्ली नहीं थे इससे उनका कहीं ज़िक्र नहीं था, वहाँ के बाशिंदे खामोशी से अपना दाल बिना टमाटर खा रहे थे।

सभी चैनल दिल्ली वालों के टमाटर संकट पर अनवरत उगल रहे थे, टीवी स्क्रीन पर गोल लाल टमाटर ही छाए हुए थे,

राजधानी में हाहाकार था, पनीर, कोफ्ते, छोले, राजमा की ग्रेवियां बिन टमाटर बेजायकेदार बेमज़ा थीं, होटलों में सूप सब्जियों के दाम ड्योढे हो चले थे, सब्जियों की दुकानों में लाल टमाटर उसके ऊपर की टोकरियां में 'टच मी नॉट' की अदा में मुस्करा रही थी, अपना महात्म्य ज्ञान पहली बार हुआ था उन्हें, वरना तो हर बार प्याज़ के ही सिर सत्ता डोल का सेहरा बंधता था।

नेताओं की आपातकालीन बैठकें चल रही थीं कि कैसे इस टमाटर संकट से उबरा जाए-दिल्लीवासियों के लिए टमाटर सस्ते होने ही चाहिए।

बैंठकें सफल रही– युद्ध स्तर पर टमाटरों के इंतजामात किए गए और दिल्ली की मंडी में बीस रुपए की दर पर सरकार द्वारा टमाटर बेचा जाना लगा, दिल्लीवासियों ने राहत की सांस ली, ग्रेवी में जायकालौटने लगा, पिलपिले टमाटरों पर हिलता-डुलता सत्ता का सिंहासन अब स्थिर था।

दिल्ली वासियों का संकट टल चुका था, इसलिए देश का संकट भी टला मान लिया गया जबकि वहाँ टमाटर अब भी चालीस पार चल रहे थे, क्योंकि वे दिल्ली नहीं थे इससे न्यूज़ चैनलों ने भी उन पर अपनी विडियो रील बेकार करनी मुनासिब नहीं समझी, समाचारों से टमाटर यूं गायब हुए जैसे गधे के सिर से सींग।

सुदूर वनप्रांतर के गाँव का एक खेत मजदूर पुत्तन चौपाल से टेलिविज़न देखकर अभी-अभी घर लौटा था, सजग नागरिक की तरह उसकी घरवाली

गोमती ने पूछा–

''काहे- का भया आज टीवी में ।''

''तगड़ी खबर हैगी-तैं खाना दे पहले-पेट कुलबुलाय रहो है भूख के मारे- का राधा हैगा आज।''

''कच्चे तेंदू मिल गए हते जंगल में- ओही में मुट्ठा भर बाजरा डालकर खिचड़ा किया हैगा।''

''कहाँ ते मिले बाजरा?''

''साहूकारिन को छाबड़ी भर खिन्नी (एक जंगली फल) दई, तब जा के एक ठो मुट्ठी बाजरा दिया वाने।''

''कसैले तेंदू को चबर-चबर चबाते पुत्तन ने घरवाली को ब्यौरा दिया–

'' अरी वो बताया था न दिल्ली वालन को टमाटर का टोटा पड़ गया हता।''

''हाँ-हाँ-कित्ते तो परेशान थे वे,'' गोमती ने हुँकारी भरी। पिछले हफ्ते भर से पुत्तन उसे समाचार के नाम पर टमाटर गाथा ही तो सुन रहा था।

''सरकार ने सुलटा दई सारी मुस्किल-सस्ते दामों में खूब सरकारी टमाटर बिक रहे हैंगे दिल्ली में।''

''कैसी जबर है सरकर।'' गोमती गद्‌भद् भाव से बोली-''कैसे साध ली विपदा की घड़ी, सुनो जी, अबकी इसई पारटी को फेर से वोट देवें का?''

''दे देवेंगे,'' पुत्तन ने हाथ चाटकर डकार लेने की कोशिश की पर पिचके पेट से कोई स्वर नहीं निकला।

सह यात्री

वे पूर्व परिचित मित्र नहीं महज महारनगरीय बात के सहयात्री थे।

रोज़-रोज़ दिखने वाले चेहरे अनजाने ही परिचित और अपने से जान पड़ते हैं ऐसा ही उनके साथ भी हुआ। अब बस में एक दूसरे पर नज़र पड़ती तो वे हौले से मुस्कुराहटों का आदान प्रदान कर लेते। सीट में सरक कर एक दूसरे के लिये जगह भी बना देते। धीरे-धीरे टुकड़ा-टुकड़ा वार्तालाप भी होने लगा। एक दिन एक के पाँव में पट्टी बंधी देख दूसरे ने उठ कर उसको सीट दे दी और स्वयं बस का डंडा पकड़ खड़ा हो गया। इसी तरह एक दिन दूसरे की तबीयत जुकाम से नासाज़ थी तो उसे टूटी खिड़की से आती तीखी ठंडी हवा से बचाने के लिये पहले ने जबरन अपना मफ्लर लपेटने को दे दिया।

परिचय कुछ कदम और आगे खिसका, अब वे देश के मौजूदा हालात तथा सुविधाभोगी मौकापरस्त राजनीति पर भी बात कर लेते। महंगाई पर तकसरा करते और इस भ्रष्टाचारी व्यवस्था की जुबानी धज्जियाँ उड़ाते। दोनों के विचार एक थे समस्यायें साँझी थी।

छः आठ माह बाद उन्हें अचानक उन्हें अहसास हुआ कि इतने दिनों के सान्निध्य के बावजूद वे एक-दूसरे के व्यक्तिगत जीवन के बारे में कुछ नहीं जानते, नाम तक नहीं। शर्मसार होकर दोनों ने एक दूसरे का नाम पूछा। नाम सुनते ही वे कुछ असामान्य हो उठे और एक दूसरे के बारे में जानने की प्रकिया पर अनायास ही विराम लग गया। नामों से स्पष्ट हो गया था वे भिन्न धर्मों के हैं।

बस रुकी तो वे बस से उतरे। सदा की तरह हाथ हिलाकर एक-दूसरे से विदा लीं, यूँ तो सब कुछ पहले सा था पर आज उन्हें चेहरों पर मुस्कान ओढ़नी पड़ रही थी।

रूप देवगुण

लक्ष्मी

प्राइवेट स्कूल में एडमिशन चल रहे थे। आफिस में कुर्सियां लगाई गई थीं। एक कोने में सरस्वती माँ की मूर्ति को सजाया गया था। प्रिंसीपल ने आफिस में आते ही धूप, दीप द्वारा उसकी पूजा की। अचानक उस दिन इतने अभिभावक आ गए कि सारी कुर्सियां भर गईं। ऐसी कोई जगह नहीं रही जहाँ कोई और कुर्सी लगाई जा सके। लक्ष्मी नाम की एक अभिभाविका अभी खड़ी थी। प्रिंसीपल ने घंटी बजाई। चपड़ासी आया। प्रिंसीपल ने कहा, ''ये खड़ी हैं, इनके बैठने के लिए कुर्सी लगाओ।''

''पर कुर्सी के लिए जगह ही नहीं है।''

चपड़ासी ने कहा। ''अरे, यह जो सरस्वती की मूर्ति पड़ी है, इसे हटाओ यहाँ से,'' प्रिंसीपल ने क्रोध में कहा।

चपड़ासी ने सरस्वती माँ की मूर्ति को वहाँ से हटा स्टोर में जा पटका और उसके स्थान पर लक्ष्मी की वाहिका उस अभिभाविका लक्ष्मी को बिठाने के लिए कुर्सी सजा दी।

रतन कुमार सांभरिया

स्वर्ग का मार्ग

मुर्गों की भरी पूरी बस्ती थी। उसमें एक बिल्ली भी रहती थी। क्योंकि वह बिल्ली थी, अत: उसकी आँखें बिल्लौरी थीं। ग्रीवा पर सिवाय दो तिरछी सफेद पट्टीनुमा रेखाओं के उसके शेष बदन का रंग घना काला था। वह धार्मिक मनोवृत्ति की जीव थी। अत: पौ फटने से पूर्व उठ जाती थी, नित्यकर्म से निवृत्त होने के उपरांत स्नान करती, तिलक लगाती और घंटों भजनकीर्तन में ध्यानस्थ रहती।

समूची बस्ती में उसकी छवि किसी पहुँची हुई तपस्विनी-सी बनी गई थी। वह अपने साधुई भेस में बस्ती से गुजरती तो मुर्गे, मुर्गियाँ और उनके छोटे-मोटे चूजे मौसी-मौसी कहकर उसका अभिवादन करते। मुर्गियाँ तो उसके पाँव छूकर 'दूधो नहाओ, पूतो फलो' का आशीर्वाद भी उससे लेती थीं। सम्मान का यह अभिभूतीकरण उसकी आँखों में नमी के रूप में उतरा रहता।

अपनी सद्वृत्ति और बस्ती के सौहार्दपूर्ण वातावरण में बिल्ली भूल गयी कि वह मांसाहारी जाति की प्राणी है। हाँ, एक-दो बार उसको इस पुश्तैनी लत ने उकेरा भी, लेकिन उसने अपने गले से माला-निकाल ली थी और उसके मनके हल कर आत्मशोधन कर लिया था।

एक दिन उसने उपवास रखा। उपवास खोलने के लिए वह मंदिर में गयी। वहाँ धार्मिक प्रवचन कर रहे पुजारी का यह उपदेश- 'जो प्राणी अपना जाति-कर्म छोड़कर अन्य कर्म करता है, वह सीधा नरक का भोगी बनता है।' सुनकर उसका अन्तर्मन आहत हो गया था। बिल्ली विचारती रही कि वह इतनी पाक साफ रहकर उपासना कर्म करती है, फिर भी नरक में जायेगी। वह धर्म संकट में फंस गयी थी कि बस्ती के मुर्गो पर कैसे दाढ़ चलाए? उसका जाति-कर्म तो घात लगाकर शिकार करना ही है।

नरक भोगने की चिंता बिल्ली को दिन-रात खंगालती रही। उसके सब नित्यकर्म अव्यवस्थित हो गए। उसके वजन में कमी आ गयी थी। शरीर पर हड्डियां उठने लगीं थीं। उसे एक युक्ति सूझी। उसने एक भव्य मंदिर बनवाया। मंदिर की पुजारिन वह स्वयं बन गई। एक चमत्कारी पर्चा भी छपवाकर उसने बस्ती में बंटवा दिया था। पर्चे में लिखा था- ''जो मंदिर में मुर्गा दान देगा,

उसके सब पाप कट जाएँगे और मनोकामनाएँ पूरी होंगी।'

मुर्गों की वह बस्ती शनैः-शनैः खाली हो रही थी। बिल्ली उल्लासित थी, वह स्वर्ग जाने का अपना मार्ग प्रशस्त कर रही है।

पहचान

मैं सुबह-सवेरे पार्क में घूम रहा था। चार चौक हरा-भरा पार्क। चौक-चौक हरी चादर-सी बिछी जोधपुरी घास। बेल-बूटे। सौंधी-सौंधी गंध। भ्रमण करते आबालवृद्ध चहलकदमी। अमुक स्वर्गीय की याद में उनके अमुक वारिस के सौजन्य से पड़ी सीमेन्ट की बेंचें।

एक बुजुर्ग बेंत का सहारा लिये आये। अस्सी के आंकडे उम्र। विधुर-सा अधूरापन। अपनी बूढ़ी काया को जैसे-तैसा संभाले वे बेंच पर आकर टिक गये थे। पूरे के पूरे सफेद। लिबास भी। बाल भी। पलकें और भौंहे भी। गोरे-चिट्टे चेहरे पर झुर्रियों का झंखाड़। झुर्रियों की घाटियों में खुंटियायी सफेद दाढ़ी-मूँछे। अविराम जुंबिश करता उनका पोपला मुँह। उनके रहन-सहन संजीदगी से ऐसा आभास हो रहा था, वे पौधे से बरगद तक सम्भ्रांत संस्कृति पगे हैं।

उनकी आँखों पर सुनहरे फ्रेम का चश्मा था। वे चश्मा सरकाते। आकाश को देखते। आँखें क्षितिज से धरती पर आ उतरतीं। वे हाथ में पकड़ी बेंत को मूठ से हत्थी तक निहारते। उसे दोनों हाथों की हथेलियों पर रख कर ऊँचा-नीचा कर झुलाते, मानो समय तोल रहे हों।

मैं पार्क में घूम रहा था, गोल-गोल। बुजुर्ग की सौम्यता, सादगी और बुजुर्गी के बरअक्स मैं उनकी ओर बढ़ता चला गया था, चुंबक की ओर खिंचते लोहकण की तरह।

ट्रांसफर होकर मैं गाँव से शहर आया हूँ। गाँव में बड़े-बूढों को सम्मान देना संस्कृति है। उनके सामने खड़े होकर मैंने अदब से हाथ जोड़े और नमस्कार किया।

सम्मान अदायगी के बाद मैं फिर पार्क में घूमने लगा था। पार्क में घूमते मैं देख रहा था, वे असमंजस में डूबे हैं। पूर्व की ओर से ऊपर उठता सूरज पार्क में फैल रहा था। टकटकी बांध कर देखती उनकी अन्वेषी नज़रें, मुझ में परिचय खोज रही थीं।

जब मैं उनके निकट से निकलने लगा, तो उनके सब्र के तट-बंध टूट गये थे। उन्होंने हाथ झालकर मुझे बुलाया और उनके पास बेंच पर बैठा लिया।

बुढ़ई से कंपकंपाता स्नेहासिक्त हाथ मेरी पीठ पर फेरते हुए नम्र कंठ वे कहने लगे– 'बेटे बुढ़ापे से बड़ा मरज नहीं होता। आँखें बूढ़ी हो गई हैं न, बिल्कुल कम देखती हैं। मैंने पहचाना नहीं, तुम किसके लड़के हो? यहाँ किस कॉलोनी में रहते हो?'

मैं श्रद्धेय को यकीन दिलाऊँ, बुजुर्गों के सम्मान में पहचान की दरकार कहाँ हैं?

सुरेन्द्र गुप्त

दादा भाई नहीं रहे

रात्रि पूरी तरह से सोई हुई थी। लाला बेनी प्रसाद समेत घर के सभी सदस्य गहरी नींद में थे। बाहर साँ-साँ की ध्वनि करती हुई ठण्डी तेज वायु अपने प्रचण्डरूप में बह रही थी। एकाएक किसी के कराहने की आवाज़ ने घर के सभी सदस्यों की नींद में खलल डाल दिया। धीरे-धीरे आवाज़ गहराती जा रही थी। बराबर आती आवाज़ से कुछ भी देर में स्पष्ट हो गया था कि यह आवाज़ उनके ही पड़ोसी लाला रामलाल की है। वह बेनीप्रसादजी के सहपाठी, और बचपन के दोस्त ही नहीं अपितु बड़े भाई समान थे। रामलाल का अपने मित्रों के बीच भी काफी सम्मान था। सभी उन्हें दादा भाई के नाम से पुकारते थे।

उनकी कराहने की आवाज़ से बेनी प्रसादजी की नींद उड़ चुकी थी। बेनीप्रसादजी समझ नहीं पाए कि उन्हें एकदम ऐसा क्या हो गया। आज शाम की हो तो बात है जब वह नेताजी सुभाषचन्द्र पार्क में, सैर के उपरांत, एक बैंच पर बैठकर, कितनी देर तक सभी मित्रों संग बतियाते रहे थे, दु:ख-सुख बांटते रहे थे। तबीयत खराब होने का ऐसा कोई अंदेशा भी नहीं था। लाला बेनीप्रसाद अपने बिस्तर पर बेचैनी की हालत में करवटें बदलते रहे। जब उनसे न रहा गया तो उन्होंने पास ही पड़े कम्बल को ओढ़ा और दरवाजा खोलकर बाहर निकल गए। जैसे ही बाहर निकले, दरवाजा खुलने की आहट सुनकर उनका बड़ा बेटा तुरन्त बोला, ''पापा, क्या बात है। कहाँ जा रहे हो?''

वह सहमकर बोले, ''बेटा लगता है पड़ोस में तुम्हारे ताऊजी की तबीयत खराब हो गई है। कितनी देर से कराहने की आवाज़ आ रही है। आज सायं समय तो बिल्कुल ठीक थे, रात्रि में न जाने क्या हो गया।''

''पापा, यदि तबीयत खराब हो गई तो क्या बात है, हैं न उनके तीन-तीन बेटे। फिर गाड़ियां भी हैं, यदि उनके बेटे देखेंगे तबीयत ज्यादा खराब है, तो डॉक्टर के पास ले जाएंगे। इसमें आपको, कतई चिन्ता करने की जरूरत नहीं है।''

''तुम ठीक कहते हो बेटा, पर सुख-दु:ख में हम हमेशा एक-दूसरे के काम आए हैं। पचास वर्षों से अधिक हो गए, दादा भाई से हमारी दोस्ती को। तुमने देखा नहीं, हमसब पर वह किस प्रकार जान छिड़कते हैं।''

''वो तो ठीक है पापा, पर बाहर बहुत सर्दी है। तुम्हारी तबीयत भी ठीक नहीं है। अब सो जाओ, सुबह देख लेना।'' बेटे ने तर्क दिया था।

तभी पत्नी की कर्कश ध्वनि सुनाई दी, ''इनकी तो शुरू से आदत है, न खुद सोते हैं और न दूसरों को सोने देते हैं। इन्होंने घर के सभी लोगों की नींद हराम कर दी।''

''पापा... प्लीज, सो जाइए, मुझे तो सुबह जल्दी उठकर जाना भी होता है। आप उनकी फिक्र क्यों करते हो, उनके बेटे हैं न, अपने-आप देख लेंगे।''

दर्द की एक तीखी लहर उनका सीना चीरती हुई चली गई थी। दादा भाई की कराहट बढ़ती ही जा रही थी। लगता था अभी तक उनका कोई बेटा नहीं उठा था। और वैसे भी उनके बेटों का पापा के साथ कैसा व्यवहार है, यह उनसे छिपा नहीं था। बस क्या करते, तड़पकर रह गए और असहाय-से बाध्य होकर बिस्तर में दुबक गए।

सुबह होने पर जब उन्होंने यह सुना कि दादा भाई नहीं रहे तो उन्हें जबदस्त धक्का लगा। उनकी आँखों में आंसू उमड़ पड़े और वह सुबक-सुबक कर रोते-राते हृदय में सोचने लगे कि दादा भाई नहीं रहे अथवा उन्हें, उनके ही और मेरे बेटों ने मिलकर मार दिया! यदि वह रात्रि में दादा भाई के घर पहुँच जाते तो शायद...।

व्यवस्था

दीनानाथ जी, सैक्रेटरियेट की लिफ्ट में भीड़ के कारण एक टांग पर खड़े-खड़े आठवीं मंजिल पर उतरने की तैयारी में थे। लिफ्ट के उस छोटे-से कैबिन में यद्यपि पंखे झूल रहे थे, पर उनसे लोगों के झुण्ड के बीच गर्मी से कतई राहत नहीं मिल रही थी। वह एकदम घुटन महसूस कर रहे थे। बात तो कुछ ही सैकेंड की थी, पर वह कुछ सैंकेंड ही काटने मुश्किल हो रहे थे। रह-रह कर उनकी निगाहें लिफ़्ट में लगे उस बोर्ड पर जा बैठतीं जिस पर मंजिलों के नंबर लिखे हुए थे। जिस भी मंजिल पर लिफ्ट रुकती उसकी नंबर लाईट से लाल हो जाता और वह थोड़ी-सी राहत महससू करते। खैर, जैसे ही वह आठवीं मंजिल पर लिफ्ट से बाहर निकले तो उनका मन हर्षोल्लास से प्रफुल्लित हो गया। होता भी क्यों न, मन्त्री जी से मिलने जा रहे थे। मन्त्री के कमरे के बाहर पहुँच कर उन्होंने चपड़ासी से पूछा- ''क्यों भाई, चौधरी साहब भीतर हैं।''

प्रत्युत्तर में उसने हाँ कहने की मुद्रा में अपनी गर्दन नीचे की ओर हिला दी।

दीनानाथ जी तत्काल दरवाजा खोल कर भीतर प्रविष्ट हो गये। सामने ही मन्त्री जी बैठे थे। जैसे ही उनकी निगाह दीनानाथ जी पर पड़ी, उन्होंने मन्त्री जी का दोनों हाथ जोड़ कर अभिवादन किया। मन्त्री जी ने उन्हें अपने बाईं ओर सोफे पर बैठने के लिये इशारा किया तथा अपने आप अन्य लोगों से बातचीत करने में मशगूल हो गये। दीनानाथ जी को एयरकन्डीशन कमरे में बैठते ही नींद का झोंका आ गया, पर बीच-बीच में वह अधमिचे नेत्रों से मन्त्री जी की ओर देख लेते कि वह भी फारिग तो नहीं हुए।

काफी देर के बाद उनका नंबर आया। उनके अलावा सभी लोग जा चुके थे। वह उठकर चौधरी साहब के सामने लगे सोफे पर जाकर बैठ गये। बात की शुरूआत मन्त्री जी ने ही की ''हूँ दीनानाथ जी, आज कुकर आण हुआ।''

''चौधरी साहब, थारे भतीजों ने सणीमा बणया सै।''

''हूँ अच्छा, यो तो आपने चोखा काम करया सै।''

''चौधरी साहब, लाइसेंस अर बिजली का कनेक्शन भी मिल गया सै, उसका थारे हथां से उद्घाटन करवाणा चाहवें सै।''

''कौण-सी तारीख़ को अर कौण-सै टैम?''

''सोलां तारीख, दिन बुधवार को शाम साड़े छः बजे।''

''अर दीनानाथ जी, इस तारीख को तो म्हारा प्रोग्राम पहले ही फिक्स है, कोई होर तारीख सुधवालो।''

''ठीक है चौधरी साहब, पण्डित से और कोई तारीख दिखवाकर फिर आपके दर्शन करूंगा।''

जब वह घर पहुँचे तो उनके बच्चे रो रहे थे। पूछने पर पता चला कि अभी सरकारी लोग आये थे, लाइसेंस कैंसल कर गये हैं और बिजली का कनैक्शन भी काट दिया है। उन्हें यह समझते देर न लगी कि यह सब उनके मन्त्री जी की बदौलत ही हुआ है।

उन्होंने मंत्री जी की चुनाव के समय तन, मन तथा धन से सेवा की थी। वह सोचते थे कि मंत्री जी तो अब उनके घर के ही आदमी हो गये, पर...।

अगले ही दिन वे फिर चौधरी साहब के यहाँ थे। इत्तफाक से चौधरी साहब अकेले ही बैठे थे। वह सीधे उनके सामने पड़े सोफे पर बैठ गये। अभिवादन की औपचारिकता निभाने के बाद उन्होंने चौधरी साहब के सामने एक लिफाफा रखते हुए कहा- ''चौधरी साहब, यो रिहा थारा हिस्सा। अर यो थारा निमन्त्रण-पत्र।''

''ओ ठीक सै, मुहूर्त यो रिहा कौण सी तारीख थी?''

''सोलां तारीख!''

''ठीक सै, उस दिन बाद में अपणे पी.ए. से इस तारीख के बारे में पूछ्या था। उसने बताया था यो तारीख तो म्हारी फ्री थी। मैंने पी.ए. से कहा था कि मेरी फोन पर दीनानाथ जी से बात कराइयो। पर लगे वह कहीं भूल ही गिया। चलो अच्छा हो गया इब आप ही पहुँच गये। ठीक सै, हम थारे इहाँ पहुँच जायेंगे। यह कार्ड म्हारे पी.ए. से कहा भी था कि मेरी फोन पर दीनानाथ जी से बात कराइयो। पर लगे वह कहीं भूल ही गिया। चलो अच्छा हो गया इब आप ही पहुँच गये। ठीक सै, हम थारे इहाँ पहुँच जायेंगे। यह कार्ड म्हारे पी.ए. को दे देना।''

दीनानाथ जी पी.ए. को कार्ड देने के बाद जब शाम को घर पहुँचे तो बेटों ने बताया कि अभी थोड़ी देर पहले वही सरकारी लोग आये थे और सिनेमा का लाइसेंस दे गये हैं तथा बिजली का कनैक्शन भी जोड़ गये हैं।

भुवनेश कुमार

अहंकार

पक्षियों की हो रही सभा में तय होना था कि उनका राजा कौन बनेगा। इसी मुद्दे पर अचानक कुछ पक्षियों को एक-दूसरे से लड़ते देखकर; एक बूढ़े पक्षी ने कहा– ''राजा बनने के इच्छुक पक्षी में इतनी ताकत और सूझ-बूझ होनी चाहिये, जिससे वह सभी पक्षियों को एक-जुट रखने के साथ-साथ उनकी सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध भी सुनिश्चित कर सके।

उसकी सलाह सुनते ही, सारे पक्षी ईर्ष्या-भरी नज़रों से एक-दूसरे को देखने लगे, एक चालाक पक्षी ने कहा–''यहाँ मौजूद तमाम पक्षियों में से मैं सर्वाधिक शक्तिशाली हूँ; इसलिए मुझे राजा बनाया जाना चाहिये....''

राजा चुने जाने के आकांक्षी दोनों पक्षी अपनी दावेदारी पर अड़ गये, तो उनकी आपसी लड़ाई में जीतने वाले पक्षी को राजा बनाये जाने पर सहमति हुई। दोनों आपस में लड़ने लगे। पहले पक्षी ने छल-कपट से दूसरे को पराजित कर दिया। विजयी घोषित होने पर वह सर्व-सम्मति से पक्षियों का राजा बन गया, तो अधिकांश पक्षी उसके इर्द-गिर्द जमा होकर उसका गुण-गान करने लगे।

अपनी विजय से बौराये छली पक्षी ने बरगद के पेड़ की सबसे ऊँची डाल पर बैठकर घमण्ड से भरी आवाज़ में कहा-''आज से मैं सभी पक्षियों का राजा हूँ और यह डाल मेरा सिंहासन है; इसलिये कोई अन्य पक्षी इस डाल पर कभी नहीं बैठेगा...''

तभी अचानक उस पर झपट्टा मारकर एक चील उसे अपने पंजों में दबा कर उड़ गई। पक्षियों में हडकम्प मच गया। सभी पक्षी ज़ार-ज़ार रोते हुए आंसू बहाने लगे, तो बूढ़े पक्षी ने कहा-''तुम सब आंसू क्यों बहा रहे हो? तुम्हें तो इस बात पर खुश होना चाहिए कि उसके चील का शिकार होने से पहले सबने यह प्रत्यक्ष देख लिया था, कि राजा बनते ही उसमें कितना अहंकार उत्पन्न हो गया था....?''

सम्मान

युवराज की सवारी के लिए ख़रीदे गये बहुत-से घोड़ों को अस्तबल में बेकार पड़े देखकर मंत्री ने राजमाता को सुझाव दिया कि यदि इनका उपयोग सामान ढोने के लिये किया जाये, तो देश के धन की बचत होगी और साथ ही आपकी लोकप्रियता में भी वृद्धि होगी। राजमाता को यह सुझाव बहुत पसंद आया। तत्काल फ़रमान जारी कर दिया गया। आज से शाही घोड़ों का उपयोग सामान ढोने में भी किया जायेगा। इसके साथ ही देश की अर्थ-व्यवस्था सुधारने के लिये शाही सामान ढोने के लिये भर्ती किये गये गधों की छंटनी शुरू कर दी जायेगी।

शाही घोड़ों को मन्त्री का फ़रमान बहुत अपमानजनक लगा। उन्होंने सामान ढोने से इन्कार कर दिया। मन्त्री को घोड़ो की हुक्म-उदूली बहुत बुरी लगी। उन्होंने सभी घोड़ों को बर्खास्त करने के बाद दूसरा फ़रमान जारी कर दिया। आज से गधों को घोड़ों को काम भी करना पड़ेगा। उनका उपयोग लोगों का सामान ढोने के साथ-साथ सवारी में भी किया जायेगा। गधों को मन्त्री का फ़रमान सम्मान-वर्धक लगा। उन्होंने उसे तुरन्त मान लिया। उसी दिन से सारा देश गधों को घोड़ों से बेहतर मानने लगा है।

अरुण कुमार

स्कूल

सीरियल समाप्त होते ही पत्नी ने टी.वी. ऑफ किया और रात के भोजन के बर्तन समेटती हुई बोली, ''आज दीपू ने खूब पानी पी रखा है। जल्दी सोने की जिद कर रहा था तो मैंने दूध भी पिला दिया था। कहीं ऐसा न हो कि यह रात को सोते-सोते बिस्तर पर पेशाब ही कर दे, आप इसे उठाकर एक बार पेशाब करवा लें।''

मैंने दीपू को जगाने के लिए आवाजें दीं, ''दीपू... ओ दीपू... उठियो बेटा... उठ!'' वह कुनमुनाने लगा था। मैंने उसे तनिक जोर से हिलाते हुए पुनः आवाज लगाई, ''दीपू... उठ खड़ा हो!''

यह सुनते ही वह तुरन्त आँखें मलता हुआ बिस्तर पर ही खड़ा हो गया और अर्द्धनिद्रावस्था में ही बोलना शुरू हो गया, ''टू वन्जा टू... टू टूजा फोर....।''

मैं हैरान। पत्नी अवाक। मैं उसे थामे खड़ा था। उसे बार-बार पुकार रहा था, ''दीपू... बेटे दीपू! तू घर पर है... स्कूल में नहीं बेटा...।'' पत्नी भी बराबर उसे जगाने का प्रयास करती रही किन्तु वह टू टैन्जा ट्वेन्टी पर ही आकर रुका...।

सीख

इसी साल के आखिरी रोज मैं रिटायर हो जाऊँगा, मुझे भविष्यनिधि वगैरह का सब मिलाकर कुल जमा सात लाख रुपया मिलेगा। अब मैं ठहरा अकेली जान (पत्नी पिछले वर्ष ही लम्बी बीमारी के बाद चल बसी थी।) अब मुझे क्या करना है इतने रुपयों का! भगवान की दया से मैं अपनी जिम्मेदारियों से फारिग ही हूँ, दोनों बेटे व इकलौती बेटी समय रहते ही ब्याह दिये थे। सब कुछ बेटी-बेटों में ही बराबर-बराबर बाँट दूँगा। बड़के को अपनी दुकान का विस्तार करना है, छुटका गाड़ी लेने को कह रहा है, बेटी-दामाद को भी अपना अधबना मकान पूरा करना है। सब खुश हो जाएँगे, मेरा क्या है। मेरा गुजारा तो जो मुझे चार हजार के करीब की पेंशन मिलेगी उसमें ही हो जाएगा। दो रोटी ही तो

खानी है मैंने, कोई-न-कोई बेटा दे ही देगा...

मैं ये सब हिसाब-किताब बिठा ही रहा था कि गोकुल चाचा ने (मेरे पड़ोसी) मेरा हाथ पकड़ लिया। कहने लगे, ''ऐसी भूल कभी मत करना रामचन्द्र, कभी मत करना। जो अपना बुढ़ापा सम्मान से वह आराम से काटना है तो सारा रुपया औलाद में बाँटकर खुद को कंगाल कभी मत करना... तेरे तो दो ही हैं, पर मेरे तो पाँच-पाँच बेटे हैं रामचन्द्र। आज दो रोटी के लिए भी तरसकर रह जाता हूँ... परमात्मा गवाह है रामचन्द्र जो मैंने एक फूटी कौड़ी भी अपने पास रखी हो, सारा पैसा सालों में बराबर-बराबर बाँट दिया था, इसके बावजूद मेरी छोटी-सी पेंशन के लिए मुझे जलील करते हैं, धमकाते हैं और आपस में भी सिर-फुटौव्वल करते हैं सो अलग।... मैं बहुत पछता रहा हूँ रामचन्द्र, आज मैं बहुत पछता रहा हूँ। अगर मैंने अपने पास लाख-दो लाख रखे होते तो ये साले लालच में ही सही पर मेरी सेवा तो करते...''

उनका शरीर गुस्से से काँप रहा था और मेरा शरीर अपने भविष्य को देखकर काँप रहा था।

पवन चौधरी 'मनमौजी'

खिलौना

उनकी शादी हुए पांच साल हो गये थे। प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी उन्होंने विवाहोत्सव धूमधाम से मनाया। पैसा पानी की तरह बहाया। मौज-मस्ती के आलम के तो क्या कहने और पैसा होना स्वाभाविक भी था। केवल दो प्राणी, न कोई पिता, न कोई माता, न कोई बहन, न कोई भाई। मित्रगण ही सभी भूमिकाओं का निर्वाह कर रहे थे।

विवाहोत्सव के अगले दिन इंसाफ ने तनिक सहानुभूति जताते हुए विवाहित युवती से पूछा, 'पांच साल हो गये हैं, लेकिन आपके आंगन में कोई 'फूल' नहीं खिला। उसके बगैर इस आलीशान महलनुमा घर सूना-सा है। आपको अब सन्तान के मामले में देरी नहीं करनी चाहिए।

'लेकिन, मैं स्वयं सन्तान पैदा करना ही नहीं चाहती?'

'मगर क्यों?'

'क्योंकि मेरे से 'डिलीवरी' दर्द नहीं सहा जायेगा। इसके आलावा छुट्टी लेनी पड़ेगी, जिसका मतलब है लाखों रुपये का नुकसान। फिर बच्चे को पालने-पढ़ाने का झंझट। उसकी बीमारी वगैरह और इन सबके ऊपर यदि बच्चा अपंग पैदा हुआ या आवारा बन गया तो?'

'फिर भी, सन्तान के लालन-पालन में जो आनन्द मिलता है, उससे तो वंचित रहोगे?'

'उसके लिए भी हमने सोचा है। अनाथालय से कोई बच्चा गोद ले लेंगे। उसे पाल-पोस, पढ़ा लिखाकर किसी को सौंप देंगे। उससे खेलने के पश्चात्। न कोई जिम्मेदारी, न कोई झंझट।'

इंसाफ के सामने भावी समाज की भव्य तसवीर तैर रही थी।

रणजीत टाडा

भारत–भ्रमण

अजय के मेहनती बेटे का दाखिला इंजीनियरिंग में होना तय हो गया था। निश्चित तारीख तक फीस भरने के लिए उसे चालीस हज़ार रुपयों की ज़रूरत थी। उसने भविष्य निधि से अग्रिम लेने का निर्णय किया।

लेखा अधिकारी को अग्रिम का फार्म प्रस्तुत करते हुए अजय ने मजबूरी बताई तो उसे परेशान देख लेखा अधिकारी की आँखों में चमक आ गई। लेखा अधिकारी ने अधिकतर स्टॉफ को गलत का भुगतान कर उनका मुँह बंद किया हुआ था ताकि वे उसकी अनियमिताओं पर उंगली न उठा सकें। केवल अजय ही उसके जाल में फंसने से बचा हुआ था।

''भविष्य निधि अग्रिम का बिल मुख्यालय भेजने और वहाँ से ड्राफ्ट आने में एक महीना लग जाएगा।'' लेखा अधिकारी ने भ्रमित करने की चेष्टा की।

''भई भविष्य निधि का पैसा क्यों खराब कर रहा है?...भारत भ्रमण के लिए छुट्टी यात्रा रियायत' अग्रिम ले लो, पोर्टब्लेयर के लिए साठ हज़ार अग्रिम मिल जाएंगे...आज ही चैक काट दूंगा।'' लेखा अधिकारी ने जाल फैंका।

''भारत भ्रमण!'' अजय ने सवालिया नज़रों से लेखा अधिकारी को देखा।

''अरे! तू भी बड़ा बावला है...बेशक जाना मत...यात्रा प्रस्थान तिथि से एक दिन पहले पिता के अचानक बीमार होने का बहाना बना यात्रा रद्द करने का अनुरोध पत्र दे देना...फिर कार्यालय तुम्हें पैसा वापस जमा कराने के लिए कहेगा....तुम मैडिकल बिल प्रस्तुत कर अग्रिम को मैडिकल बिल में ऐडजस्ट करने का निवेदन कर देना।''

लेखा अधिकारी ने जाल को कसते हुए योजना की तफ़सील समझाई।

अजय ने प्रश्न उठाया, ''मैडीकल बिल?''

''वो सब मैं कर लूँगा तुम निश्चित रहो।''

अपनी सीट पर आ कर अजय के दिमाग ने हिसाब लगाया–फीस भरने और लेखा अधिकारी को देने के बाद बारह हज़ार बच जाएँगे...उससे उसके झुमके बन जाएंगे...बेचारी को कितने सालों से लारे दे रहा हूँ...हींग लगे ना फिटकरी...। वह अभीभूत हो फार्म भरने लगा। अचानक दिल में ऐंठन सी हुई, अजय पसोपेश में, दिल और दिमाग के द्वंद के बीच ज़मीर बोली, ''काली

भेड़ों में शामिल होने जा रहे हो बरखुरदार!''

वह चेता...उसने दोनों हाथों से फार्म के कई टुकड़े कर डस्टबिन में फैंके, जो पंखे की तेज हवा से डस्टबिन में गिरने की बजाय कमरे के फर्श पर छितरा गए। अजय को लगा, नीले फर्श पर बिखरे कागज के सफेद टुकड़े, जैसी छोटी-छोटी किश्तियां हैं, जो समुद्र में डूबते हुए जहाज़ के यात्रियों को बचाने के लिए जहाज़ के चारों ओर खड़ी हैं।

दुलीचंद रमन

शहीद

शहीद का शव तिरंगे में लिपटा था और मंत्री जी का धुँआधार भाषण जारी था। ''धन्य है वो माँ जिसने ऐसे बहादुर बेटे को जन्म दिया। जिसने मातृभूमि की रक्षा में अपने प्राणों की आहुति दे दी। हमें इनकी कुर्बानी पर गर्व है।'' फिर उसने बड़ी मुश्किल से याद की गई पंक्तियाँ दोहरा दीं–

''शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर वर्ष मेले ...''

इसी के साथ सारी भीड़ नारे लगाने लगी–

''शहीद बलवान सिंह अमर रहे।''

मंत्री जी फिर शुरू हो गये– इस परिवार की पूरी जिम्मेदारी आज से मेरी है। अपने बेटे राकेश की तरफ इशारा करके कहा– ''आज तक मेरा एक ही बेटा था आज दो हो गये हैं।'' इतना कहकर शहीद के बेटे को अपनी गोद में उठा लिया।

ऐलान हुआ कि सरकार की तरफ से शहीद के परिवार को दस लाख रुपये व शहीद की विधवा को ताउम्र पेंशन दी जायेगी। प्रशासन ने सैल्यूट ठोका, हवाई फायर किये गये। अंतिम संस्कार के बाद भीड़ छँटने लगी।

घर पहुँचकर मंत्रीजी का लड़का राकेश कहने लगा– ''पापा, मैं भी सेना में भर्ती होना चाहता हूँ ताकि मातृभूमि की रक्षा कर सकूँ।'' इतना सुनते ही मंत्री जी के चेहरे की रंगत उड़ गई। क्रोध में आकर बोले–''तुम्हारा दिमाग तो नहीं खराब हो गया। फौज में भर्ती होना है। ये हमारा काम नहीं, बल्कि गरीब किसान-मजदूरों के बेरोजगार बेटों का काम है। हम तो उन्हें श्रद्धांजलि दे सकते हैं। शहीद दूसरों के घर में ही अच्छे लगते हैं।''

राकेश अपने पिता के असली चेहरे को पढ़ने की कोशिश कर रहा था।

मोर्चा

बारिश पिछले चार दिनों से रुकने का नाम नहीं ले रही थी। ननकू हर सुबह लेबर चौक पर खड़ा हो जाता व शाम को खाली हाथ मुँह लटकाए घर लौट आता। बरसात के कारण जन-जीवन अस्त-व्यस्त और निर्माण कार्य ठप्प। ऐसे

में मजदूरी मिले भी तो कहाँ। उसे खाली हाथ लौटते हुए भूखे बच्चों व बीवी के सामने शर्मिन्दगी उठानी पड़ती।

आज वह रामू के चाय के खोखे पर खड़ा रेड़ियो पर समाचार सुन रहा था। सुनामी के कहर पर परिचर्चा चल रही थी। ननकू के मन में आया कि रोज तिल-तिल करके मरने से तो अच्छा है कि यहाँ पर भी सुनामी आ जाये। सारा खेल खत्म।

लेकिन अगले ही पल उसने अपना सिर झटक दिया– नहीं। वह अपनी तरफ आते दो व्यक्तियों की तरफ आशा भरी नजरों से देखने लगा। शायद आज काम मिल जाये।

खंड– 3

कुछ और खिड़कियां

विकेश निझावन

परिचय

स्वयं की एक छोटी-सी नौकरी होने पर पिता की अब यही एक इच्छा रह गई थी कि बेटा पढ़-लिख जाए और कहीं अच्छी नौकरी पा ले। पिता की साध पूरी हो गई। बेटा पढ़-लिखकर डॉक्टर बन गया। पिता ने उसका विवाह भी बड़े चाव से किया। लेकिन कुछ दिन बाद बेटा पिता से उखड़ा-उखड़ा रहने लगा। ...अन्ततः वह पत्नी को लेकर अलग हो गया। पिता की छोटी-सी नौकरी की वजह से वह बहुत शर्म महसूस करता था। उसने पिता से सम्पर्क तोड़ लिया।

बहुत दिनों बाद किसी के विवाह-समारोह में पिता और बेटा दोनों शामिल हुए। बेटा वहाँ भी पिता से कटा हुआ खड़ा रहा। एक पुराने परिचित ने पिता को खड़े देखा तो उसने सबसे उनका परिचय करवाया, ''डॉक्टर प्रशान्त हैं न, उनके पिता हैं ये।''

पिता ने चारों ओर नजर दौड़ाई, फिर बड़े शान्त लेकिन दृढ़ स्वर में बोले, ''आपने परिचय जरा गलत करवाया। वह मेरा बेटा है लेकिन मैं उसका पिता नहीं। अगर आपको विश्वास नहीं हो तो उससे पूछ देखिए।''

लोगों ने नजरें घुमाईं...

बेटा वहाँ से ओझल हो चुका था।

अमृतलाल मदान

एक हाथ वाला देवता

उन दिनों परिस्थितियाँ कुछ ऐसी थीं कि मैं बहुत निराश-सा था। प्रेरणादायक पुस्तकें पढ़ता या मन्दिर भी जाता तो भी न प्रेरणा मिलती, न शान्ति। मेरा जमूरा परेशान था कि कैसे मदद करे!

एक शाम मन्दिर की आरती के बाद बाहर निकले तो अँधेरा गाढ़ा हो गया था, सर्दी भी बढ़ गई थी। पास ही एक निर्माणाधीन भवन के आँगन में उसका चौकीदार आग जलाए बैठा था। ''आओ बाबूजी, आग ताप लो आप भी।'' उसने पुकारा।

मैं आँगन में चला गया। चौकीदार ने पास ही रखी हुई एक छोटी कुल्हाड़ी से मोटी सख्त लकड़ी काटी और आग में डाल दी। मैंने पहली बार देखा कि उसका एक ही हाथ था। दूसरा हाथ टूँड बना कन्धे से लटक रहा था, फिर भी गजब का आत्मविश्वास था उसके चेहरे पर। मेरे प्लास्टिक की एक कुर्सी पर बैठ जाने के बाद वह फिर अपनी चौकी पर बैठ गया तथा मेरे पूछने पर वह बताने लगा कि कैसे उसका हाथ चारे की मशीन में आने से कट गया था। मशीन ने उसके हाथ का चारा तो बनाया था पर उसे बेचारा न बना पाई थी।

इसी बीच मेरा जमूरा मन्दिर से आरती की थाली उठा लाया और चौकी पर बैठे चौकीदार की आरती उतारने लगा। मैं उस चौकीदार की हिम्मत देखकर जैसे फिर से ऊर्जावान हो उत्साह से भर गया था। मेरे सामने एक हाथवाला देवता बैठा था, जो फूँक मारकर अब अंगारों को सुलगा रहा था। वह मेरे भीतर की आग भी सुलगाता-सा लगा जबकि चार या आठ हाथोंवाले देवता ऐसा करने में असफल रहे थे। मैं भी कुर्सी छोड़ जमूरे के साथ आरती में शामिल हो गया।

हीरालाल नागर

मच्छर और सिपाही

ड्यूटी पूरी होते ही उसने बंदूक एक बगल की और चारपाई पर पसर गया। जब मच्छरों ने काटना शुरू किया तो उसने मच्छरदानी तान ली।

आधी रात के करीब उसकी नींद उचट गई। उसने देखा– चार-पांच-मच्छर, मच्छरदानी के अंदर भनभना रहे हैं। वह बड़बड़ाया, 'साले! मच्छरदानी के भीतर भी नहीं सोने देते।'

'क्यों पड़े हो यहां, भाग जाओ और सोओ घर में चैन की नींद।' एक मच्छर ने काम में लगकर कहा।

'वहाँ भी तुम्हारा साम्राज्य है।' सिपाही बड़बड़ाया

'हाँ। आदमी और मच्छर का आदिम रिश्ता है।' दूसरा मच्छर भुनभुनाया।

'शट अप। मैं फालतू बातें सुनना पंसद नहीं करता। लेकिन तुम यह बताओ कि तुमने मच्छरदानी के अंदर घुसने की हिम्मत कैसे कर ली?' सिपाही ने मच्छर से कहा।

मच्छर रौब से बोला–'जिस तरह तुम थोड़ी-सी दरार पाकर दुश्मन के ठिकानों पर टूट पड़ते हो-नदी, पहाड़ और रेगिस्तान पार करते हुए।'

सिपाही ने ललकारा– 'तुम मच्छर हो, सिर्फ मच्छर, मेरे से– तुम्हारी क्या तुलना? कहाँ तुम रक्तपिपासु और कहाँ मैं... ?'

'देश का सिपाही, यही कहना चाहते हो न तुम।' मच्छर ने बात पर बात मिलाते हुए आगे कहा– अंतर सिर्फ शरीर का है, आवश्यकता का नहीं। मैं अपनी भूख की शांति के लिए मारा-मारा फिरता हूँ और तुम भी भागे-भागे फिरते हो-सिर्फ अपनी भूख की शांति के लिए। यदि यह सच नहीं है तो फिर किसलिए पड़े हो इस बियाबान में।

'वाचाल मच्छर, तेरी यह मजाल!' सिपाही ने हवा में हाथ लहराया।

उसने देखा, उसके आसपास वहाँ कोई नहीं था। सामने था तो केवल भांय-भांय करता अकेलापन। बाढ़ में डूबी फसल। अंधी होती मां...। तिल-तिल मरता बाप और बेवा-सी करती पत्नी। एकबारगी उसकी अंतश्तेचना हिल गई। इतने में रात दो बजे का बजर बज उठ। उसने बंदूक संभाली और ड्यूटी पर खड़ा हो गया। उसने देखा-मच्छर फिर भनभना रहे थे।

दस रुपये का नोट

कॉलेज छोड़ने के बाद हमारी पहली मुलाकात थी। मित्र को न जाने कैसे पता चला कि मैं इस कॉलोनी में रहता हूँ। कमरे में बैठते ही मैंने टेर लगाई– 'सुनीता! देखो ज़रा कौन आया है।

पत्नी सम्भवत: घर पर नहीं थी। उत्तर नहीं मिला इतने में मेरा पांच वर्षीय लाड़ला आ धमका और पैरों से लिपटते हुए बोला– 'पापा! पापा! मम्मी गुप्ता आंटी के घर गई हैं।

रोज़ का हाल है यह। किसी न किसी चीज़ के लिए पत्नी को पड़ोस में भागना पड़ता है। महीने के आखिरी दिन.... बड़ी मुश्किल में फंस गया था।

मित्र ने ध्यान भंग किया– 'और कितने हैं, राजेश?'

'दो और हैं– एक लड़का और एक लड़की।'

दोनों स्कूल गए हैं।' मैंने बरबस मुस्कुराने का यत्न किया।

'अब नहीं होना चाहिए।' मित्र की फीकी हँसी बड़ी देर तक कमरे में लटकी रही।

समय निकलता जा रहा था और अभी तक हम चाय भी नहीं पी पाए थे। 'शायद, स्कूल चली गई होगी पत्नी बच्चे को लेने। आज हाफ–डे है न। आते ही होंगे।' मैंने अपनी कमज़ोरी को छिपाने के कई एक बहाने बना डाले। सच्ची–झूठी बातें कब तक झेलता। मैं बबलू पर बरसा– तू क्या कर रहा है। इधर चल। दौड़ के जा, देख। कहीं तेरी मम्मी सविता आंटी के घर पर हों। जल्दी से बुलाकर ला। अभी तक तो हम दो बार चाय पी चुके होते।''

''छोड़ भी यार। जब से आया हूँ चाय की रट लगा रखी है। मैं हर पंद्रहवें दिन दिल्ली आता हूँ। फिर कभी पी लेंगे चाय–भाभी के हाथ की। मुझे चलने दो अब।'' यह कहकर मित्र उठ खड़ा हुआ।

मेरे मना करने पर भी वह नहीं माना और बबलू को दस का नोट थमाकर बाहर निकल आया। मैंने बबलू को खींचकर कमरे के अंदर किया और उसे समझाया– ''तुम घर के अंदर ही रहना। मम्मी के आने पर कहना– पापा बाज़ार गए हैं।''

बबलू सिर खुजाता ही रह गया।

अब हम दोनों सड़क नाप रहे थे। मैंने कहा ''यार! इतने दिन बाद मिले और एक कप चाय भी, नहीं पिला पाया। घर न सही, चलो किसी ढाबे पर

बैठकर पी लेते हैं- चाय।''

हम दोनों एक ढाबे में बैठ गए। चाय के साथ समोसे भी मंगा लिए थे। चाय खत्म होने के बाद मैंने कुछ हल्कापन महसूस किया।

रोब के साथ मैंने दुकानदार की तरफ पैसे बढ़ाए। दुकानदार न जाने क्या देखकर बोला-

''बाबूजी! इतनी सर्दी नहीं, फिर भी आपका हाथ कांप रहा है।''

मित्र समझ पाया या नहीं, लेकिन बबलू को दिया गया उसका दस रुपये का नोट मेरे हाथ में बड़ी देर तक फड़फड़ाता रहा।

बौना आदमी

अंतत: फैसला हुआ कि इस बार भी माँ हमारे साथ नहीं जाएगी। पत्नी और बच्चों को लेकर स्टेशन पहुँचा। ट्रेन आई और हम अपने गंतव्य की ओर चल पड़े। ठीक से बैठ भी नहीं पाए होंगे कि डिब्बे के शोर को चीरता हुआ फिल्मी गीत का मुखड़ा–'हम बने तुम बने एक दूजे के लिए' गूंज उठा। उंगलियों में फंसे पत्थर के दो टुकड़ों की टिक्...टिक्...टिकिर...टिक् के स्वर में मीठी पतली जादू का-सा असर किया। लोग आपस में धंस-फंसकर चुप रह गए।

गाना बंद हुआ और लोग 'वाह-वाह' कर उठे। उसी के साथ उस किशोर गायक ने यात्रियों के आगे अपना दायां हाथ फैला दिया, ''बाबूजी दस पैसे!'' मेरे सामने पाँच-छह साल का दुबला-पतला लड़का हाथ पसारे खड़ा था।

''क्या नाम है तेरा?'' मैंने पूछा।

''राजू।''

''किस जाति के हो?''लड़का निरुतर रहा। मैंने लड़के से अगला सवाल किया, ''बाप भी मांगता होगा?''

''बाप नहीं है।''

''माँ है?''

''हाँ है, क्यों?'' लड़के ने मेरी तरफ तेज निगाहें कीं।

''क्या करती हैं तेरी मां?''

''देखो साब उल्टी-सीधी बातें मत पूछो। देना है तो दे दो।''

''क्या?''

''दस पैसे।''

''जब तक तुम यह नहीं बताओगे कि तुम्हारी माँ क्या करती है, मैं एक पैसा नहीं दूँगा।'' मैंने लड़के को छकाने की कोशिश की...

''अरे बाबा! कुछ नहीं करती। मुझे खाना बनाकर खिलाती-पिलाती है और क्या करती है।''

''तुम भीख मांगते हो और माँ कुछ नहीं करती? भीख मांगकर खिलाते हो उसे?''

''माँ को उसका बेटा कमाकर नहीं खिलाएगा तो फिर कौन खिलाएगा?'' लड़के ने करारा जवाब दिया। मेरे चेहरे का रंग बदल गया, लगा जैसे मैं उसके सामने बहुत बौना हो गया हूँ।

विष्णु सक्सेना

भूल

एक बहुत बड़ा जमींदार था–ठाकुर प्रताप नारायण। ठाकुर जितना दानी था, उतना ही घमंडी भी। उसके द्वार पर आया कोई भिखारी खाली हाथ नहीं जाता था। वही ठाकुर, गाँव में किसी के दु:ख में शामिल तक नहीं होता था। कोई मर भी जाता तो उनके यहाँ स्वयं नहीं जाता। नौकर उसकी खड़ाऊँ लेकर जाता था। सब देखते और अपमान का घूंट पीकर रह जाते। जल में रहकर मगर से बैर कौन करता।

एक दिन ऐसा भी आया। उसकी पत्नी का एक लंबी बीमारी के पश्चात् देहांत हो गया। समाचार गाँव में बिजली की तरह फैल गया। लोग कानाफूसी करने लगे। सबने एकमत होकर निर्णय लिया।

किसी का नौकर, किसी का भाई तो किसी का लड़का, घर के मालिक की खड़ाऊँ लेकर अर्थी में शामिल होने पहुँच गये। सबके हाथों में थाल और थाल में खड़ाऊं थी। अर्थी उठाने को चार आदमी भी नहीं थे।

जमींदार ने आये हुए लोगों की ओर देखा। सब सिर झुकाये खड़े थे। सबके हाथों में थाल और थाल में खड़ाऊँ थी। ज़मींदार की आँखें शर्म से झुकी जा रही थीं।

आनन्द

पूर्वाभ्यास

वह एक साधारण-सा ढ़ाबा होता, जिसकी कोने की मेज पर हम अक्सर शाम को चाय पीते थे। चाय आने पर वह नमक की मांग करती। चुटकी भर नमक चाय में मिलती और पीने लगती। मैं पूछता, ''चाय में नमक किसलिए?''

वह हँस देती, ''चीनी मुझे हमेशा नहीं मिलती। कभी महंगी इतनी होती है कि मैं खरीद नहीं पाती, कभी पड़ोस के दुकानदार के यहाँ होती ही नहीं। नमक, लेकिन कहीं भी, किसी से भी मिल सकता है। बिल्कुल मुफ्त भी। चीनी के साथ थोड़ा नमक लेने की आदत अगर शुरू से ही डाल ली जाये तो उन दिनों में, जब चीनी नहीं होती, सिर्फ नमक की चाय ज्यादा बुरी नहीं लगती। आसानी से चल जाती है।''

वह प्यार का समय होता और वह अचानक मेरे किसी कहे का, मेरी कल्पना में भी जो नहीं होता वैसा कोई अप्रिय अर्थ निकालने लगती और फिर मुझ से झगड़ने लगती। मेरी सफाई बे असर होती और मैं खीझ उठता, ''अज़ीब हो तुम, प्यार के समय भी झगड़ने लगते हो!''

भेद-भरे स्वर में वह रहस्य प्रकट करती, ''नफरत और अलगावादी ताकतों के इस युग में किसी का प्यारा-सा साथ दुर्लभ होता जा रहा है। मगर किसी से झगड़ा और अलगवा कभी भी हो सकता है। अचानक और अनचाहें भी। सैनिक शान्ति के समय भी युद्ध का पूर्वाभ्यास करते रहते हैं। हमें चाहिए कि साथ होने के दिनों में भी थोड़ा-बहुत लड़ते-झगड़ते रहें। बाद में इस से फायदा रहता है।''

बाद में तबादलों के एक मनहूस मौसम में उसका दूर के एक शहर में तबादला हो गया था, जबकि मैं वहीं, जहाँ अब तक हम दोनों होते थे, अकेला रहने को था। उस शहर के हम दोनों के एक साथ होने की वह आखिरी रात, तारों भरी मगर बिना चांद की रात थी और मैं वहाँ था, जहाँ पहले पहुँचने वाले को बाद में आने वाले की प्रतीक्षा करनी होती थी।

उसका देर से आने का समय भी गुज़र चुका तो मैं आशंकित और बदहवास-सा उसके कमरे की तरफ भागा। मेरे लिए यह एक और सदमा था कि मुझ से बिना मिले ही वह यह शहर छोड़ चुकी थी।

यकीनन वह एक बेमुख्वत और दगाबाज लड़की थी। लेकिन हैरत मुझे खुद पर थी कि सरासर बेवफाई करने पर भी वह मुझे बेवफा नहीं लग रही थी।

भूमण्डलीकरण

गाँव में जूते पहनने वालों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही थी, लेकिन वर्षों से मोची सिर्फ दो थे। दोनों की दुकानें आमने-सामने थीं और दोनों बुरे पड़ोसी थे। हालांकि दोनों के पास गुजारे लायक धंधा था, लेकिन एक आशंका प्रत्येक को परेशान किए थी, ''यदि ज्यादा लोग सामने आने वाले से जूते खरीदने लगे तो मेरा धंधा चौपट हो जाएगा, मैं बर्बाद हो जाऊँगा।'' दोनों ही को लगता कि तमाम दुनिया में अगर किसी से खतरा है तो बस सामने वाले से इसलिए उनमें प्रतिद्वंद्विता थी, ईर्ष्या थी, कटुता थी, शत्रुता थी। इसीलिए प्रत्येक सामने वाले के ग्राहकों को तोड़ने का भरसक प्रयत्न करता, ताकि पड़ोसी के हाथों बर्बाद होने से पहले ही उसे बर्बाद कर दिया जाए।

हालांकि किसी ने किसी को बर्बाद नहीं किया फिर भी दोनों ही की बर्बाद होने की आशंका सच होकर रही।

वह जूतों का निर्माण करने वाली एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी थी, जिसने ग्रामीणों की जरूरतों के अनुरूप सस्ते, टिकाऊ और आकर्षक जूते बना कर दोनों ही के मुँह का निवाला छीन लिया था।

रमेश सिद्धार्थ

मूल्य-ह्रास

केबिन के बाहर खड़े अधेड़ ग्राहक की व्यग्र नज़रें एक बार फिर मेरी नज़रों से 'क्लिप' कर केबिन के अन्दर कॉल में व्यस्त किशोरी को घूरने लगीं-किसी गैस वैल्डिंग की नुकीली फ्लेम की तरह। फिर कुछ मिनिट बाद कंधे उचकाकर कुछ बुदबुदाता वह बाहर निकल गया। करीब बीस मिनट से वह वार्तालाप में व्यस्त थी। चूंकि मेरी कुर्सी केबिन के साथ ही थी, मैं चुपचाप केबिन की खुली छत से छिटकते शब्दों से अपनी कल्पना में दोनों ओर के संवादों का अनुमानित अर्थभाव जोड़ता रहा था। किसी 'वेरी सिली' तो कभी 'वेरी क्यूट' से लेकर 'डियर संजू' से चलने वाली यह मैराथन वार्ता सामान्य संवाद, शिकवा-शिकायत, उलाहना, प्रशंसा, स्नेह आदि विविध भाव-प्रदर्शनों से निर्बाध गुजरती रही। फिर अंततः उसने बाहर आकर बिल का भुगतान कर दिया। पूरे पचास रुपए एक संतोषभरी मुस्कान उसके चेहरे पर थी और आँखों के आगे अदृश्य तितलियां फड़फड़ा रहीं थीं।

यूँ तो बीच-बीच में भी मैंने उसे पड़ोस वाले एस.टी.डी. बूथ में आते-जाते देखा पर अलगी बार जब वह मेरे केबिन में घुसी तो छत से टपकने वाले शब्दों 'न्यू बाइक', 'फैन्टास्टिक', 'लांग-ड्राइव', 'फन', 'कूल प्लेस', 'सी फूड' को जोड़कर मेरी कल्पना एक और ऐपीसोड देख रही थी। उसे बातों में, तो मुझे गहन कल्पना में पता ही न चला कि समय इतना हो गया था। इस बार बिल था अड़तालीस रुपए। भुगतान करने के बाद वह लहराती हुई, कुछ गुनगुनाती हुई चली गई।

इसके बाद जब वह आई तो उसकी चाल में कुछ तेजी, नज़रों में छटपटाहट और आवाज़ में झिझक, 'ओ.के''आठ बजे', 'कब''क्यों''सेफ''अब', 'जब', 'तब' तक रहता था और मेरा बिल रहता था आठ और दस के रुपए के बीच।

करीब दो माह तक यूँ ही चलता रहा। फिर एक दिन जब वह आई तो चेहरे पर वह रंगत, चाल में वह उमंग और वह तरंग नहीं थी। केबिन की खुली छत से 'मीन' 'सेल्फिश' 'लायर' 'चीट' 'घटिया' जैसे शब्द थके-हारे, निढ़ाल-अशक्त स्वरों में लुढ़कते से चले आ रहे थे। मीटर की ओर देखकर चुपचाप चार रुपए काउण्टर पर रखकर वह धीरे-धीरे बाहर निकल गई।

मुकेश शर्मा

सुनीता विलियम्स ने कहा था

अरे गुप्ता जी के तो भाग ही फूट गए भाई। बहुत बुरी बनी उनके साथ...।

'क्या हुआ पापा?'

'अरे बेटा, तू ठहरा नया-नया कॉलेज-स्टूडेंट। तेरी समझ में ये बाते नहीं आएँगीं।

फिर भी पापा कुछ बताओ तो सही'

अरे बेटा! गुप्ता जी का बेटा गया अमेरिका पढ़ने गया, वहाँ चीन की किसी लड़की से उसकी दोस्ती हो गई। अब कह रहा है कि उसी से शादी करूँगा। लड़का इण्डिया का लड़की चीन की नौकरी करेंगे अमेरिका में। तीन-तीन मुल्कों के बीच की इन विभाजन रेखाओं का क्या होगा?''

'पापा, कोई विभाजन रेखा नहीं है इस धरती पर।

अरे बेटा, तुझे किसने बहका दिया?'

'पापा आपको मालूम है सुनीता विलियम्स ने क्या कहा है?'

''कौन सुनिता विलियम्स?''

भारतीय मूल की अमेरिकी अंतरिक्ष यात्री उसने कहा है कि जब अंतरिक्ष यान पृथ्वी से ऊपर उड़ता है। तो नीचे देखने पर पृथ्वी एक जैसी लगती है।

अलग-अलग देशो के बीच कोई विभाजन रेखाएं दिखायी नहीं देती। ये तो इन्सानों की बनायी विभाजन रेखाएं हैं, प्रकृति की बनाई नहीं है।

'लेकिन बेटे, हमें तो धरती को धरती पर रहकर देखना है। यहाँ तो बात-जात बिरादरी से भी आगे, गोत्र शासन तक जा पहुँची है। ऐसे में अब हम क्या करें?'

'पापा कम्प्यूटर, इन्टरनेट ने अब पूरी पृथ्वी को समेट लिया है। इसलिए 'वसुधैव कुटुम्बकम' का फार्मूला अपनाओ और सुनीता विलियम्स की बात मान लो। अपना नज़रिया बदल लो पापा।''

असली कमाई

चौराहे पर लाल बत्ती होने के बावजूद मारूति वैन चौंक पार करके दौड़ती चली

गयी। राज्य पुलिस की जीप में बैठे ट्रैफिक पुलिस के सब इंस्पेटर रामलाल को यही बात सहन नहीं होती। फिर क्या था, वैन आगे-आगे और पुलिसिया जीप पीछे-पीछे। दो किलोमीटर के फासले पर ही वैन रुकवा दी गयी।

वैन में एक गर्भवती महिला दर्द से चिल्ला रही थी। साथ बैठी दूसरी बुजुर्ग महिला उसे ढांढ़स बंधा रही थी। पति ने बिना भूमिका बनाये सीधे याचना की- डिलीवरी के लिए तुरन्त अस्पताल पहुँचना था इसलिए गाड़ी भगाने की गुस्ताख़ी कर दी, थानेदार सॉब। इसलिए प्लीज अभी तो मुझे जाने दो....'

'आ..आ.. मर गयी, हाय माँ, मर गयी...'

रामपाल असमंजस में था।

'सत्यानाश!' बुजुर्ग औरत ने माथा पीटा लिया- 'अब अस्पताल जाने का कोई फायदा नहीं। थानेदार भैया, अपने दस्ताने दे दो। अब बहस छोड़ो और जैसे-जैसे मैं बोलूं, थानेदार और तू, दोनों वैसे ही करते जाओ....'

दृश्य बदल चुका था। वैन का चालान काटने आया सब इंसपेक्टर रामपाल और गर्भवती महिला का पति दोनों डिलीवरी सहायक में तबदील हो चुके थे।

'भगवान तुम्हारा भला करे दोस्त! बहुत-बहुत धन्यवाद....' महिला का पति रामपाल के सहयोग से गद्गद था- 'क्या सेवा करूं आपकी? ये चालान की बात छोड़ो और आप-अपनी 'कमाई' करो....'

डिलीवरी का दर्द देखने के बाद रामपाल का पुलिसिया रौब छू-मंतर हो चुका था-'मेरी कमाई तो हो गयी। जो दिल से तुमने मुझे दुआ दी है ये मेरी सच्ची कमाई है। आज जो सूकून दुआ से मिला, वो रिश्वत लेकर भी कभी नहीं मिला। तुम तुरंत अस्पताल पहुँचो देर न करो...' रामपाल गर्व से मस्तक, ऊँचा करके मुस्कुराया।

अंजु दुआ जैमिनी

मीडियोकर

''हैलो, मीना! यह मैं क्या सुन रही हूँ? तुम्हारे बेटे ने! क्या सच है यह?''

''क्या बताऊँ, उसे तो काल खा गया। मेरा भाग ही फूटा था। मुझे अकेला छोड़ गया। जीते-जी मर गया,'' फोन पर सुबक उठी।

''हुआ क्या था? कौनसी क्लास में पढ़ता था? कहीं तुमने तो कुछ नहीं कहा?'' आशंकित स्वर में उसने उसे टटोला।

''नहीं रीना! भला मैं क्यों उसे कुछ कहूँगी। ग्यारहवीं में पढ़ता था। इकलौता बेटा था पर बिगड़ा नहीं था। हम पति-पत्नी उसके बहुत करीब थे। दोस्तों-सा व्यवहार करते थे।''

''फिर--किसी ने कुछ खिला दिया या कोई नशा-वशा?''

''न-न-बिल्कुल नहीं। पढ़ाई में बहुत होशियार था। इस टर्म एग्जाम में उसके नब्बे फीसदी से डेढ़ फीसदी कम नंबर आए थे। बस यही उसके जी का जंजाल बन बैठा और उसने अपने जीवन का अंत कर दिया।''

''अरे, तो फाइनल में मेहनत कर लेता। इसमें जान देने की क्या जरूरत आन पड़ी?''

''बस क्या कहूँ, जब भाग्य की नज़र टेढ़ी हो तो अक्ल भी टेढ़ी हो जाती है। दरअसल नंबर कम आने के कारण स्कूल प्रशासन उसे मीडियम बच्चों वाले सेक्शन में ट्रांसफर करने वाला था। उसी सेक्शन के कुछ बच्चों ने उसे चिढ़ाते हुए कहा, अब तो तू भी हमारे जैसा हो गया, मीडियोकर। बस यही शब्द उसे निगल गया।''

उसकी सुबकियां तेज होती गई।

सुरेश जांगिड़ उदय

मानसिकता

देश जब अंग्रेजों का गुलाम था तब मेरे पिताजी मुझे पढ़ाया करते थे। तब मैंने सबसे पहले सीखा 'क' से कबूतर, 'ख' से खरगोश आज देश आज़ाद है। मैं अपने बेटे को पढ़ाता हूँ। मेरे बेटे ने पहले सीखा 'ए' फॉर एप्पल, 'बी' फॉर बॉल।

कार्य-कुशलता

नए आए डिप्टी कमिश्नर महोदय को घुड़सवारी का बेहद शौक था। उन्होंने सुपरिण्डैण्ट पुलिस को बुलाकर प्रात: छ: बजे अपनी कोठी पर घोड़ी पहुँचाने का आदेश आते ही दे दिया।

एस.पी.ने अपनी कार्यकुशलता का परिचय देने के लिए डी.एस.पी. को साहब की कोठी पर प्रात: 4 बजे ही घोड़ी पहुँचाने का आदेश दे अपनी चुस्ती का प्रमाण दिया।

इंस्पैक्टर ने सब इंस्पैक्टर से बारह बजे, सब इंस्पैक्टर ने हवलदार को दस बजे, हवलदार ने सिपाही को आठ बजे घोड़ी साहब की कोठी पर आदेश देकर सबने अपनी कार्य कुशलता का परिचय दे दिया।

घोड़ी वाले को सिपाही ने शाम छ: बजे ही पहुँचने का आदेश दिया। कहीं लेट न हो जाऊँ यह सोचकर घोड़ी वाला शाम पाँच बजे ही साहब की कोठी पर उपस्थित हो चुका था।

नरेन्द्र कुमार गौड़

शंखनाद

जब बस एक छोटे से स्टॉप पर रुकी तो अन्य सवारियों के साथ एक आवारा किस्म का लड़का भी बस में चढ़ लिया। बस में एक भी सीट खाली नहीं थी तथा कुछ सवारियाँ बस में पीछे की तरफ खड़ी थीं। वह लड़का आगे की तरफ गया और एक दूसरे लड़के को जो सीट पर बैठा था बोला– ''चल औय, खड़ा हो। यहाँ मैं बैठूँगा।'' लड़का आश्चर्य से बोला– ''ये आप क्या कह रहे हैं– इस सीट पर तो मैं शुरू से बैठा आ रहा हूँ। अगर आप महिला, बुजुर्ग या बीमार व्यक्ति होते हो मैं बिना कहे ही आपको सीट दे देता किन्तु आप न तो बुजुर्ग हैं और न ही बीमार लगते हैं।'' बदमाश किस्म के लड़के ने शरीफ और कमजोर लड़के के गाल पर थप्पड़ छाप दिया– ''उल्लू के पट्ठे। बीमार हों मेरे दुश्मन और बूढ़े हो जाएँ तेरे घर वाले।'' थप्पड़ खाकर लड़का रोने लगा। उसने लड़के को कॉलर पकड़कर उठा दिया तथा खुद सीट पर बैठ गया।

लड़का खड़ा-खड़ा रो रहा था। वह बस में अकेला सफर कर रहा था। बस की बाकी सवारियों को भी मानों साँप सूँघ गया था। सभी अपनी नजरें नीची किये बैठे थे। लड़का जोर-जोर से रोता जा रहा था। उसके आँसू उसके कोमल गालों से लुढ़कते हुए नीचे गिर रहे थे।

एक बूढ़ी माँ जो बस में पीछे की तरफ बैठी थी, तेजी से उठकर आगे आई और रोते हुए लड़के का हाथ थाम उस बदमाश के पास जाकर बोली–''तेरे को बहुत घमंड है ना अपने जिस्म की ताकत पर। तू अगर सही दर्द का बच्चा है तो इस लड़के को थप्पड़ मारना तो दूर इसकी तरफ उँगली करके दिखा दे। देख! मेरे मुँह में दाँत नहीं है लेकिन तुझे कच्चा नहीं चबा गई तो मैं अपने बेटों की असल माँ नहीं। अब तेरी खैरियत इसी में है कि अब तू इस सीट से उठ जा।'' बूढ़ी माँ की आवाज में शेर जैसी गर्जना थी। बस में सारे लोग चिल्लाने लगे– ''मारो इसे, मारो इस बदमाश को। उतारो इसे बस से नीचे।'' ऐसा लग रहा था मानों बूढ़ी माँ के अत्याचार और गुंडागर्दी के खिलाफ शंखनाद कर दिया हो।

ओम प्रकाश कादियान

धर्म–परिवर्तन

वह गरीबी से दुखी था। बड़े प्रलोभन के बाद उसने हिन्दू से ईसाई धर्म बदल लिया। इसाइयों ने उसको काफी धन दे दिया। कुछ दिन बाद में इसाइयों का एक ग्रुप उसका हालचाल पूछने घर आया। उन्होंने पूछा, ''आप कैसे हो?''

''सब राम की कृपा है।'' उसने बड़े सहज स्वभाव से कहा तो एक ईसाई ने आदेश दिये कि तुम 'राम' की नहीं 'मसीहा' की कृपा कहो।'' ये बात सुनकर उस गरीब ने पूछा ये 'मसीहा' कौन है?''

हरभगवान चावला

चंदा

इस बार राज्य की पंजाबी अकादमी ने कविता, कहानी और उपन्यास लेखन के लिए जिन तीन लेखकों को पुरस्कृत किया, संयोग से वे तीनों एक ही शहर के थे। शहर की साहित्यिक संस्था 'अभिव्यक्ति' ने तय किया कि शहर का नाम रोशन करने वाले इन लेखकों को एक भव्य समारोह का आयोजन कर सम्मानित किया जाये। निर्णय होने के साथ ही साहित्य प्रेमियों से चंदा एकत्र किया जाने लगा। संस्था के अध्यक्ष शहर के प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. आर.एस. सुग्गा के पास भी चंदे के लिए पहुँचे। डॉ. सुग्गा अक्सर साहित्यिक आयोजनों में देखे जाते थे। न केवल देखे जाते थे बल्कि साहित्य पर विद्वतापूर्ण तरीके से बोलते भी थे। 'अभिव्यक्ति' के अध्यक्ष ने जब उन्हें बताया कि उनकी संस्था द्वारा तीन लेखकों को सम्मानित किया जा रहा है तो डॉ. सुग्गा ने प्रसन्नता जाहिर की। संस्था के अध्यक्ष ने चंदे के लिए निवेदन किया।

'हाँ–हाँ क्यों नहीं, पर एक दिक्कत है, मुझे पंजाबी बोलनी नहीं आती', डॉ. सुग्गा बोले।

'इसकी कोई ज़रूरत नहीं है।'

'ज़रूरत तो है ही, मुख्य अतिथि बोले ही नहीं तो लोग क्या कहेंगे?'

'आप मुख्य अतिथि नहीं होंगे डॉ. साहब, दिल्ली से एक साहित्यकार आ रहे हैं।'

'अध्यक्ष को भी तो बोलना ही पड़ता है, आप कहें तो मैं हिन्दी में...'

'अध्यक्षता तो नगर के एक कवि करेंगे।'

'अच्छा मैं न मुख्य अतिथि, न अध्यक्ष, फिर चंदा किस बात का?'

जितेन्द्र सूद

वादा

एक बड़ी-सी झाड़ी के पीछे से अचानक झपटकर दो शत्रु सैनिकों ने उसे दबोच लिया। उन्होंने अत्यन्त फुर्ती से उसे पेट के बल धरती पर गिरा दिया। एक सैनिक ने उसकी दोनों बांहों को पीठ की ओर मरोड़कर पकड़ लिया और दूसरे सैनिक ने उसकी तरफ बंदूक तानकर उसकी बंदूक, पिस्तौल, एक बड़ा चाकू और उसकी कमर में बंधे तीन ग्रेनेड अपने कब्ज़े में ले लिये। उसकी जेबों की तलाशी लेकर उसका पर्स और पहचान-पत्र भी ले लिया। वह जान गया कि अब चन्द पल के लिए ही उसका जीवन है। उसने साहस जुटाकर उसे निशाने पर लिए खड़े सैनिक से कहा, 'मेरे पर्स में मेरी बेटी की तस्वीर है। मुझे एक बार वह तस्वीर दिखा दीजिए। फिर.... ?' वह वाक्य पूरा नहीं कर सका। उसका कण्ठ अवरूद्ध हो गया और उसकी आँखों में आंसू भर आये।

बंदूकधारी ने उसके पर्स से उसकी बेटी की तस्वीर निकाल कर उसके सामने रख दी। उसने आँखें मिचमिचाकर उन्हें अश्रुमुक्त कर अपनी बेटी के चित्र को देखा और भरे गले से कहा, 'मेरी प्यारी बेटी! मुझे क्षमा करना, मैं जल्दी घर लौटने का अपना वादा पूरा नहीं कर सका। तुम मेरा इन्तज़ार भी न करना क्योंकि अब मैं कभी भी तुम्हारे पास नहीं....।'

वह फूट-फूटकर रो पड़ा और आगे नहीं बोल पाया। उसके हृदय की पीड़ा शत्रु-सैनिकों को भी छू गई। उनके कठोर चेहरे तनिक ढ़ीले हो गये। उन्होंने अर्थ-पूर्ण दृष्टि से एक-दूसरे को देखा और अनबोले ही एक फैसला ले लिया। उन्होंने उसे अपनी पकड़ से मुक्त करते हुए कहा, 'जाओ, भाग जाओ और अपनी बेटी से किया वादा पूरा करो।' वह खड़ा हुआ। उसने अविश्वास से उन दोनों सैनिकों को देखा। तब बंदूकधारी ने उसकी तरफ़ बंदूक तानकर कहा, 'तुम भागते हो या फिर...।' उसे जैसे होश आया। 'जाता हूँ, जाता हूँ, कहता हुआ वह सिर पर दोनों हाथ रखकर तेज़ी से भागा।

दोनों सैनिक एक-दूसरे को देखकर मुस्कुराये। एक ने अपनी जेब से अपने बेटे का चित्र निकाल कर चूमा और दूसरे ने अपनी बेटी के चित्र को अपने सीने से लगा लिया।

शील कौशिक

वर्चस्व

अधिकारी ने हैड क्लर्क को डांटते हुए कहा, 'तुमने मेरे कहने के बावजूद मयंक की लोन फाइल पर एतराज लगा कर क्यों लौटा दिया?'

'सर, उसमें औपचारिकताएं पूरी नहीं थी।' हैड क्लर्क ने सहज भाव से कहा।

'तो क्या हुआ? वह कहीं भागे थोड़े ही जा रहा था, बाद में पूरी करवा लेते?'

'एक बार रुपये लेने के बाद वो हाथ आने वाला नहीं था, फिर कहाँ ढूँढते उसे?'

'कहा ना तुम्हें, वो मेरा रिश्तेदार है। मैं अपने आप पेपरज़ पूरे करवा लेता।'

'परन्तु वो तो कह रहा था कि मेरा और साहब का तो एक ही रिश्ता है और वह है रिश्वत का।'

अधिकारी का गुस्सा साँतवें आसमान पर था। उसने उसे घूरा और डाँटते हुए कहा, 'तुम्हारे बहुत पर निकल आए हैं और आजकल बहुत बोलने....'

'ठीक कह रहे हैं आप। तो एक बात आप भी सुन ले कि न तो मैं रिश्वत खाता हूँ और न ही कोई डाँट खाऊँगा।'

हैड क्लर्क ने लगातार डांटते हुए अधिकारी को दृढ़ता से कहा। इस बार ईमानदारी की डाँट खाकर अफसरी चुप हो गई थी।

लोक सेतिया

खज़ाने की खुदाई

सगल पदार्थ हैं जग माहीं, कर्महीन नर पावत नाहीं। कुछ ऐसा प्रवचन देते-देते एक महापुरूष को लगा कि उसे भी अब तक कुछ नहीं मिला, प्रयास तो बहुत कर लिये। अन्य साधु-महात्मा अरबों-खरबों के मालिक बन बैठे और मैं हूँ कि इतना पूजा पाठ कर के भी कुछ भी हासिल नहीं हुआ, केवल कुछ लोग हैं जो गुरु जी कह प्रणाम करते रहते हैं। बिना धन-दौलत सम्मान भला किस काम का। यही सोचते-सोचते सो गये और रात को सपना देख लिया कि किसी जगह सोने का भंडार दबा पड़ा है ज़मीन के नीचे। अगली सुबह अपने विशेष चेले से सपना देखने की बात बता डाली। चेले को लगा गुरू जी हैं इतने वर्षों से भक्ति कर रहे हैं अवश्य ईश्वर ने उन पर कृपा करने के लिये ही सपना दिखलाया होगा। उसने कहा क्यों न हम किसी तरह वो जगह प्राप्त कर लें और वहाँ अपना आश्रम बनवाने के लिए निर्माण कार्य करने की जगह चुपचाप अपने ही भक्तों से खुदाई करवा कर वह सारा सोना खोज लें। गुरुजी ने कहा पहले एक कहानी सुन लो फिर जो तुम कहोगे मैं वही अवश्य ही करूँगा। चेले का लालच जा ही नहीं रहा था। इसलिये उसने गुरुजी से वचन ले लिया था कि कहानी सुनने के बाद वो जो भी कहेगा गुरुजी को मानना होगा। उसे गुरुजी पर भगवान की कृपा का विश्वास खुद गुरुजी से भी अधिक था।

गुरुजी ने कहानी सुनाई। एक गरीब रोज़ सपने देखा करता कि उसे कहीं से रास्ते चलते बहुत सारा धन मिल जाये। कोई आ कर बताये कि तुम्हारे बाप दादा हमें इतना धन दे गये थे हम वापस करने आये हैं, क्योंकि अब वे नहीं हैं दुनिया में, इसलिये इस पर तुम्हारा ही अधिकार है। कभी लाटरी में जीतने का, कभी जुआ के खेल में जीत का ख्वाब देखा करता। एक रात उसे सपना आया कि गाँव से दूर एक सुनसान जगह जहाँ झाड़ियां ही झाड़ियां हैं वहाँ नीचे ख़जाना दबाया हुआ पड़ा है सदियों से। अपने सपने को सच समझ उसने अपना घर बेच डाला और वो जगह खरीद ली। किसी को पता न चले इसलिये उसने जगह के चारों तरफ ऊँची-ऊँची दीवारें चुनवा ली, बस एक दरवाज़ा रखा, भीतर आने-जाने के लिये। उसने रोज़ वहाँ कुआँ खोदना शुरू कर दिया। सुबह से शाम तक जितना भी खोद पाता शाम को बाहर निकल दरवाज़ा बंद कर ताला लगा कर

वहीं बाहर सो जाता रखवाली के लिये। गहराई बढ़ने लगी तो उसने एक रस्सी बाहर खूंटे से बांध दी ताकि उसे पकड़ कर नीचे जा सके और बाहर आ सके। खुदाई करने से पहले दरवाज़ा भीतर से बंद कर देता था ताकि किसी को नज़र न आये कि वहाँ क्या चल रहा है। उसका ध्यान खुदाई की गहराई पर हर समय रहता और उसे पता ही नहीं चला कि बार-बार इस्तेमाल करते-करते रस्सी की गांठ ढीली हो कर खुलती जा रही है और एक शाम जैसे वो रस्सी पकड़ ऊपर आने लगा गांठ खुल गई और रस्सी नीचे कुएं में आ गिरी। अब वहाँ लाख चिल्लाता रहे कोई भी बचाने नहीं आ सकता था और वो एक दिन वहीं भूख प्यास से मर गया। गुरूजी ने कहा इस कहानी को सुनने के बाद भी तुम चाहोगे कि हम भी अपने लिये खुद कब्र खोदने का कार्य करें।

चेला समझदार था, वक्त को पहचानता था। उसने कहा माना सपना सच नहीं होता, झूठ भी हो सकता है, मगर आपको सपना आया है ऐसा पहली बार, तो इसका कुछ न कुछ तो अर्थ है। हमें कब्र नहीं खोदनी पड़ेगी, हम कुछ और भी काम करते हैं। हम सरकार से कहते हैं कि वहाँ खजाना दबा हुआ है, आपको सपना आया है और सरकार को मनाते हैं कि वो सारा सोना निकाल ले। गुरुजी बोले लेकिन ऐसा करने से हमें क्या मिलेगा और अगर सोना न निकला तो हम झूठे साबित हो जाएंगे। गुरु गुड़ होता है तो चोला शक्कर। चेले ने कहा आप पूरी बात सुन लो पहले मेरी, अगर सरकार को ख़जाना मिला तो सरकार भी आपको पुरस्कार स्वरूप कुछ तो अवश्य देगी और साथ में आपको नाम, मान-सम्मान भी मिलेगा। सिद्ध पुरुष समझे जाने लगेंगे। आपके पास भक्तों की भीड़ लग जायेगी। तमाम-धनवान आपको खुद आ कर चढ़ावा चढ़ा जाया करेंगे। लेकिन खज़ाना न भी मिला तो आपको कोई कुछ भी नहीं कहेगा, जग हँसाई सरकार की ही होगी जो वो भूखे नंगे गरीब की तरह लोभ लालच में फंस गई। और आप यकीन मानो गुरू जी सरकार से बड़ा गरीब देश में कोई भी नहीं है, उसके पास चाहे जितनी भी दौलत हो उसे कम ही पड़ती है। आज तक इन्सानों के लोभ लालच के किस्से आपसे सुनते आये हैं। मैं आपको सुनाऊँगा सरकार के लोभ लालच में मूर्खता की कहानी। मगर आप डरें मत खज़ाना नहीं है तो नहीं मिलेगा मगर दोनों सूरत में आपका नाम हर जुबान पर होगा। आप करोड़ों रुपये खर्च कर विज्ञापन देकर वो हासिल नहीं कर सकते जो इस प्रकार मुफ्त में मिल सकता है। गुरुजी मान गये, मानना ही पड़े, वादा जो किया था। अब गुरुजी को अपना चेला गुरु से बढ़ कर लगने लगा है। खुदाई हो रही है। एक दिन रस्सी भी टूटनी है और उसमें दब कर कौन-कौन फना होता है, भविष्य के गर्त में है ये बात।

गुरनाम सिंह

डाकू

इकलौते युवा पुत्र के आकस्मिक निधन से रामशरण बुरी तरह टूट गया। कुछ ही दिनों में इस सदमे में उसकी पत्नी भी चल बसी। विषाद में डूबकर वह एक ख्यातिप्राप्त धार्मिक गुरु का शिष्य बन गया। अब वह काम-धंधे में से उचाट होकर अपनी सारी ऊर्जा गुरुजी की सेना में व्यय करने लगा। जब कभी उसके मन में घर गृहस्थी बसाकर नए सिरे से जीवन की शुरूआत करने का विचार बनता तो गुरु जी 'संसार मिथ्या' कहकर उसके विचार की धारा को मोड़ देते गुरु जी के एक करीबी संगी ने जब इसकी वजह जाननी चाही तो वे बोले, ''देखो, तुम हमारे खास आदमी हो, तुम से क्या छिपाना। रामशरण के पास करोड़ों की सम्पत्ति है, जिसका अब वह अकेला स्वामी है। यदि उसे उसके एकांकीपन से न निकलने दिया जाए तो एक दिन देखना यह सारी संपत्ति डेरे के नाम न्यौछावर कर जाएगा।''

हम कोई डाकू तो हैं नहीं, जो निकालो बन्दूक और धांय से गोली मार कर लूट लिया। हमारे अपने तौर-तरीके हैं वह इसमें कोई कानूनी लफ़्डा भी नहीं है। हमारे यहाँ तो लुटने वाले को लुटे जाने का आभास तक नहीं होता। यूं ही थोड़े न डेरे की आज इतनी शाखाएं हैं और नाम हैं।'' बस ज़रा तरीके से चलना पड़ता है' इतना कह कर अनायास ही उनके होठों पर एक कुटिल मुस्कान फैल गई, जो किसी नामी डाकू के अट्टहास से भी कहीं भयानक थी।

कमलेश चौधरी

जोश

दीपक गरीब किसान का बेटा था। मेधावी व परिश्रमी। सरकारी स्कूल में पढ़ता था। आकर पशुओं को चारा डालने का काम करता। छुट्टी वाले दिन खेतों में पिताजी की सहायता करता। देर रात तक पढ़ता रहता। ट्यूशन के लिये पैसा नहीं था। दीपक की मेहनत रंग लाई और वह दसवीं कक्षा में मेरिट में स्थान पा गया। लोगों की प्रशंसा से उत्साह बढ़ा और दस जमा दो में भी यह स्थान बरकरार रहा। वजीफा मिला। यूनिवर्सिटी में दाखिला मिल गया। उसने सम्मान जनक स्थिति बरकरार रखते हुए बी.एस.सी. और बी.एड. की परीक्षाएं पास कीं। वह अध्यापक बनना चाहता था। वह सोचता था कि सरकारी विद्यालयों की छवि अच्छी नहीं थी। यदि वह अध्यापक बन गया तो जी-जान लगा पूरी ईमानदारी से छात्रों को पढ़ायेगा। गरीबी में जन्म लेने के कारण वह अच्छी तरह जानता था कि अमीरों के बच्चे तो प्राईवेट स्कूलों में पढ़ते हैं और ट्यूशन भी रख लेते हैं। मगर गरीब बच्चों के लिए तो सरकारी स्कूल ही एकमात्र सहारा है। एक दिन उसने अखबार में अध्यापकों की भरती का विज्ञापन देखा। फार्म भर दिया। टैस्ट पास भी कर लिया। इण्टरव्यू भी पास हो गया। अब उसके हाथ में गणित-अध्यापक का नियुक्ति-पत्र था। वह पूरे जोश व उत्साह में लबलबा भरा हुआ विद्यालय पहुँचा। उसको टाईम टेबल दे दिया गया। बच्चों के नाम पूछे। फिर पढ़ाई करवाने के लिए गणित की पुस्तक मांगी। ''किताब नहीं है मास्टर जी।'' पूरी कक्षा के छात्रों का समवेत स्वर गूँजा। दीपक हैरान। ऐसा कैसा हो सकता है कि पूरी कक्षा में एक भी बच्चे के पास पुस्तक न हो। उसने जानना चाहा तो एक बच्चे ने खड़ा होकर कहा-सर जी हमें हेडमास्टर जी ने कहा था कि पुस्तकें मत खरीदो। और सरकार ने भी अभी तक नहीं दी। यह सितम्बर का महीना था। यानि छः महीनों से बच्चे बिना पुस्तकों के ही विद्यालय में आ रहे थे। तभी दीपक ने देखा प्रत्येक बच्चे के पास उसका बस्ता रखा हुआ था। वह हैरान था। जब पुस्तकें ही नहीं हैं तो फिर इन बस्तों में क्या रखा है?

उसने एक बच्चे से पूछा- जब तुम्हारे पास पुस्तकें ही हैं तो फिर बस्ते में क्या रख कर लाते हो।

पूरी कक्षा का समवेत स्वर फिर गूंज उठा- ''जी कटोरा'' दीपक की

हैरानी का कोई अंत नहीं था।

''वह किसलिये?''

''जी दोपहर का खाना खाने के लिये।'' सामूहिक स्वर लहरी गूंजी दीपक मन मार कर उनको पढ़ाने लगा। उसने सोचा चलो इनसे कुछ पूछा जाए। लिखवा कर देखा जाये। उसने पूछा–बच्चों गिनती आती है।

''जी मास्टर जी।'' बच्चे एक साथ बोले।

उसने एक बच्चे के हाथ में चॉक देकर कहा– बच्चे बोर्ड पर छः सौ पन्द्रह लिखो।

बच्चे ने चाक पकड़ा और लिखा 60015। बच्चा छठी में था। दीपक का जोश ठण्डा पड़ चुका था।

परफैक्ट टैररिस्ट

''दादी, बकरी दूध कब देगी? कितने दिन हो गये काली चाय पीते।'' दीनू व टीनू ने अपनी दादी से पूछा।'' बच्चों बस दो चार दिन सब्र करो।'' दादी बोली।

ठीक तीन बाद बकरी ने सफेद बर्फ जैसा मेमना दिया। बच्चों को तो जैसे खिलौना मिल गया। उसका नाम रखा मीणा।

चार दिन बाद शाम को जीतू महतो के घर दो पुलिस वाले आये और बोले–बात ये है हमारे बड़े साहब दौरे पर आने वाले हैं। रात को हमारी चौंकी पर रूकेंगे। गोश्त के लिये तुम्हारा मेमना चाहिए।

दादी बोली– ऐसा जुल्म मत कीजिये हुजूर। बकरियां भी हैं। बेजुबान हैं तो क्या हुआ। वह तो तड़प–तड़प कर जान दे देगी हुजूर।

जीतू बोला– जनाब, बात एक और भी है। हमारा यह धर्म है कि हम दूध पीते मेमने को मांस के लिये कभी नहीं देते। जब वह दूध पीना छोड़ कर घास खाने लगता है तभी उसे मांस के लिये देते हैं। और तुम एहसान फरामोश एक मेमना नहीं दे सकते हो।''

''उसके लिए आपको वेतन मिलता है साहब।'' जीतू बोला।

यह सुनकर दोनों तमतमा गए–''तुम देते हो वेतन। साला जुबान चलाता है।'' यह कहकर उन्होंने मेमना उठा लिये।

''दया कीजिये हजूर मैं आपके पैर पकड़ती हूँ।'' दादी बोली।

''बापू हमारा मीणा'' दोनों बच्चे चिल्लाये।

मै.... बकरी ने गला फाड़ कर आर्तनाद किया। जीतू आपा खो बैठा। झोंपड़ी

में रखी एक बल्ली उठा कर उनके सिर पर वार किया। वे दोनों जीतू का रौद्र रूप देखकर भाग गये। मेमना छोड़ दिया। उसे देख लेने की धमकी देकर चले गए।

जीतू ने अपने परिवार को बीहड़ की टेकरी में भेज दिया। माँ और पत्नी ने साथ चलने के लिए कहा तो वह बोला– यदि उनको मैं यहाँ नहीं मिला तो सारे गाँव के पुरुषों की खाल उधेड़ी जाएगी और बहू बेटियों की इज्जत उतरेगी। मैं यहीं पर उनका इन्तजार करूँगा। वह सरफरोश बन गया था।

अगले दिन समाचार पत्रों में सुर्खी लगी– नक्सलियों को बेलगाम होता हौसला। पुलिस चौकी पर हमला। दो कांस्टेबल घायल। तलाश जारी।

शाम को जीतू पुलिस चौकी में उल्टा लटका हुआ था। उसे बुरी तरह धुना जा रहा था। पुलिस वाले उससे कबूल करवाना चाहते थे कि उसे मीडिया के सामने ये कहना होगा कि उसके गिरोह ने चौकी पर हमला किया था। मगर जीतू कह रहा था कि वह वही दोहरायेगा जो वास्तव में हुआ है। वह दो दिन से उल्टा लटका हुआ था। सुबह होते ही पुलिस वाले ने मुँह पर थप्पड़ मारा तो खून की उल्टी हुई और वह मर गया। ''अरे यह तो गया साहब।'' सिपाही चीखा। दारोगा ने कहा– इसे उतारो। उतार कर उसके खून सने कपड़े उतारे गये। पैण्ट कमीज पहना कर बैल्ट कस दी गई। पैरों में जूते और सिर पर काला कपड़ा बाँध दिया। उसे आधा किलो मीटर दूर जंगल में डाल दिया गया। छाती पर कम्बल डालकर दो गोलियाँ जीतू की लाश में दाग दी गईं।

अब मीडिया के कार्यालयों में फोन बजने लगे। पुलिस चौकी पर हमला करने वाले गिरोह का सरगना पुलिस मुठभेड़ में मारा गया। चैनल वाले अपने डंडे डोरी उठाकर ग्राउंड जीरो पर जाने की तैयारी करने लगे। तभी एक सिपाही हाँफता हुआ दारोगा के पास आया। ''सर सब गुड़ गोबर होने वाला था। एक बहुत बड़ी गलती हो गई। मुझे ध्यान आया कि हमने लाश के पास ए.के. 47 नहीं रखी। यह लीजिये थाने से उठाकर लाया हूँ। अरे वाह! अबकी बार पुलिस मैडल के लिये तुम्हारा नाम भेजा जाएगा।'' ए.के. 47 लाश की बगल में रख दिया।

''कैसा लग रहा है सर'' एक सिपाही ने दारोगा से पूछा।

''ए परफैक्ट टेरोरिस्ट।'' दारोगा ने उतर दिया। सबके चेहरे पर मुस्कुराहट थी।

इन्दु गुप्ता

दुकानदार

इह का जीजाजी आप तहं बहुत भोरे चार बजे ही जग जावत हो फिर अपनी पान तम्बाकू की गुमटी काहे नौ बजे तक नहीं खोलत हौ। आपका सब परोसी पनवारी तौ छह साढ़े छह बजे ही अपन अपन गुमटी खोलकर बैठ जइहैं। ठीक भी हय उनकी दिन भर होवै वाली कमाई का आधा हिस्सा तो सुबह ही हो जइहैं क्योंकि सुबह जल्दी जाना वाला दफ़्तर का बाबू लोग स्कूल कॉलेज का लरिका बिद्यिारथी लोग दिन भर का बीड़ी सिगरेट तम्बाकू का कोटा सुबह ई तौं खरीद लै जइहैं। अब आठ बजै दुकान खोलने के बाद तो दिन भर थोड़े बहुत कामगार जैसन ही गाहकी को मिलते होंगे या फिर संझा बाद देर रात तक बैठना परत रहिन। इतनी मेहनत का बाद भी आप आधा ही कमा सकत रहिन..

हाँ सिबरतन भइया चिंता ओर चिंतन तो तुमरा ठीक वा..सिगरिट पान तम्बाकू गुटखा की अधिक कमाई सुबह ही होती है। स्कूल कॉलिज का इह लरका लोग से तो हम लोग डुप्लीकेट माल का भी अच्छा कीमत वसूल लेते हैं सिकायत का भी कौनो खतरा नहीं रहता। वे परिवार समाज से चोरी–छिप जो माल कीनत रहिन...परन्तु भैया तम्बाकू सेवन उनके स्वास्थ्य और जिनगी का वास्ते जहिर हय। अब हम ठहिरै दुकानदार आदमी...सुबह जल्दी गुमटी खोलके हम चार पइसा कमावै का लालच महं फंसि कै इन बिद्यिारथी लोगन का सिगरिट तम्बाकू बेचवे का गुनाह न कर देवहैं इह मारै तो हम अपना गुमटी ही आठ बजा का बाद खोलत रहिन। तब तलक हम तोहार जिज्जी संग बतला लेव उसका घर का कामकाज मां मदद कर देव तोहार दोनों भानजन की कसरत नहान धोवन पढ़ाई लिखाई स्कूल भेजने का काम पे नज़र रख ल्हइयैं ताकि इह लोगन का बरा होकै जानलेवा तम्बाकू का बिपारी न बनन परिन....फिर दिन भर तो बख्त ही न मिलत है...''

सुरेन्द्र कुमार

रक्षक

वह अपने माता–पिता के साथ उस विशाल मंदिर में पूजा के लिए आया था। उस मंदिर की विशेष मान्यता थी कि वहाँ अपनी मनोकामना पूरी करने के लिए दूर–दूर से लोग आते थे। जब वह मंदिर में स्थापित उस विशाल मूर्ति को प्रणाम करने को कहा एवं बताया कि वह तीनों लोकों के रक्षक भगवान की मूर्ति है। पुत्र ने अपने पिता की आज्ञा का पालन किया एवं उसके पश्चात् उस बालक ने भगवान की उस विशाल मूर्ति को निहारते हुए कहा, 'पिताजी, उस विशाल मूर्ति के आगे यह इतने मोटे एवं लंबे सींटेचे क्यों लगे हैं। हमें उसके समीप क्यों नहीं जाने देते?'

'बेटा,! तुम देख रहे हो कि इस विशाल मूर्ति पर सोने के कितने आभूषण हैं एवं लाखों के नहीं बल्कि करोड़ों के हीरे एवं जवाहरात जड़े हैं। इसलिए इसे लोगों से दूर सीखचों के पीछे रखा हुआ है पिता ने उत्तर दिया।

कुछ क्षण पश्चात् वे बाहर आ गये। बाहर द्वार पर दो पुरुष हाथों में बंदूक लिए खड़े थे।

पुत्र ने पिता से प्रश्न किया, 'पिताजी यह यहाँ पर किसलिए खड़े हैं?'

'बेटा, तुम्हें बताया तो है कि अन्दर भगवान की मूर्ति कितनी कीमती है। उसकी रक्षा के लिए ये पहरेदार खड़े हैं। पिता ने उत्तर दिया। बेटे ने उन पहरेदार को प्रणाम किया। पिता ने चकित होकर बेटे से ऐसा करने का कारण पूछा तो बेटे ने कहा कि मैं उनको प्रणाम कर रहा हूँ, जो तीनों लोकों के रक्षक की रक्षा कर रहें हैं।

आचार्य भगवान देव चैतन्य

ठसक

पत्नी के देहांत के बाद गाँव को अलविदा कहकर राम प्रकाश अपने पुत्र और पुत्रवधू के पास शहर में ही आ गया था। हालांकि जीवनभर उसका साधु स्वभाव ही रहा था, मगर अब बढ़ती आयु के साथ-साथ वह और भी अधिक सहज और सरल हो गया था। जो मिला, जैसा मिला चुपचाप खा लिया। फिर भी बहु कुछ न कुछ कहने-सुनने को निकाल ही लिया करती थी। एक दिन दोपहर का भोजन करके राम प्रकाश धूप में लेटा हुआ था। थोड़ी देर बाद उसका बेटा रमेश आकर भोजन करने लगा तो पहला कौर मुँह में डालते ही वह अपनी पत्नी पर क्रोधित होकर बोला, 'नाजो, तुम्हें इतने दिन खाना बनाते हो गये, मगर अब तक भी अंदाजा नहीं हुआ कि दाल या सब्जी में कितना नमक डालना है...।'

'ज्यादा हो गया क्या...?'

'ज्यादा? मुझे तो लगता है तुमने दो बार नमक डाल दिया है। लो मुझसे ऐसा खाना नहीं खाया जाता...।' रमेश गुस्से में आकर उठ गया और वाशबेसन पर हाथ धोने लगा।

नाजो राम प्रकाश की ओर देखते हुए तुनक बोली, 'अब मैं भी क्या करूँ, यहाँ तो कोई इतना तक बताने वाला भी नहीं है कि नमक कम है या ज्यादा। चुपचाप खाकर टांगे पसार लेते हैं।'

रामप्रकाश समझ गया कि बहू यह सब उसे ही सुना रही है, मगर स्वभाव के अनुसार वह चुपचाप लेटा रहा।

राधेश्याम 'भारतीय'

चोर

पत्नी ने कमरे में घुसते हुए कहा–''सुनते हो जी, मैं कई दिन से देख रही हूँ एक औरत और एक आदमी शाम ढलते ही हमारे घर के आगे से गुजरते हैं...''

''इसमें कौनसी बड़ी बात है। दिन में न जाने कितने लोग यहाँ से गुजरते होंगे...''

''आप तो किसी बात को सीरियस लेते ही नहीं। आपसे तो कुछ कहना ही बेकार।'' इतना कह पत्नी वापिस जाने लगी।

तभी पति ने हाथ पकड़कर पास बिठाते हुए कहा, ''इतनी जल्दी नाराज हो जाती हो अच्छा बताओ, क्या कहना चाहती हो?''

''आजकल किसी का कोई भरोसा है। दिन में मकान के चारों ओर से देख लेते हैं और रात को सेंध लगा देते हैं। वैसे भी शहर में कहीं ना कहीं चोरियाँ हो रही हैं।'' पत्नी ने किसी आशंका का लबादा ओढ़ते हुए कहा।

''तुम्हें लगता है वे चोर होंगे?''

''अब किसी के अन्दर तो घुसा नहीं जाता। खुद सोचिए, वे हमारे घर से थोड़ी आगे तक जाते हैं, फिर वापिस आ जाते हैं। इस तरह कई चक्कर लगाते हैं।''

''हो सकता हो सैर करने आते हों।''

''सैर करते, तो आगे भी कितनी लम्बी-चौड़ी सड़क पड़ी है, वहाँ तक जा सकते हैं।''

''ठीक है, जब वे शाम को आएँगे, तो मैं बात करूँगा।''

शाम को जैसे ही वे घूमने आये तो पति ने उन्हें रोकते हुए पूछा– ''भाई साहब, आप इधर नये आये हैं क्या?''

''हाँ, आपके मकान के पीछे वाली गली में रहते हैं।''

''अच्छा, तो सैर करने निकले हैं?''

''हाँ।''

''तो एक बात पूछ सकता हूँ?''

''क्यों नहीं।''

''जब आप घूमने ही निकलते हैं तो इससे आगे दूर तक सड़क जाती है तो

वहाँ तक जा सकते हैं। आप तो यहीं से वापिस हो जाते हों?''

''अरे भाई साहब, इसका कारण आपका घर है।''

यह सुनते ही तुरन्त पत्नी ने पति से नजर मिलाई, मानो कह रही हो–देखा मैं कहती थी ना, इनकी नजर हमारे मकान पर टिकी है।

''मतलब मैं समझा नहीं... हमारे मकान पर निगाह।'' पति ने अपनी बात पर कुछ जोर देते हुए कहा।

''अरे भाई साहब, आप किस्मतवाले हैं। आपके घर में इतनी सुन्दर फूलों से लदी बेल है इनकी खुशबू पूरे मोहल्ले को महका रही हैं... मैं तो जैसे ही ड्यूटी से आता हूँ थोड़ी देर बाद ही खिंचा चला आता हूँ यहाँ। मेरी पत्नी भी प्रकृति प्रेमी है। इसने वहाँ अपने घर के आँगन में पेड़-पौधों के साथ कई तरह की फूलबेल लगाई हुई हैं। हमारा तो मन करता है आपके घर से दूर ही ना जाएं। आह! मोगरे के फूलों की क्या खुशबू आ रही है। भाई साहब, हम तो चोर हैं– आपके फूलों की खुशबू के...''

''अरे भाई साहब, हमें माफ करना। हमने आपको वैसे ही टोक लिया। आप तो बड़े भले आदमी हैं। आइए, अन्दर आइए चाय लीजिए।'' और फिर वे किसी बात पर ठहाका लगाते हुए अन्दर चले गए।

कीचड़ में कमल

कार्यालय में एक परचेजिंग कमेटी बनी हुई थी, जिसके पाँच सदस्य थे।

पाँच में चार सदस्यों की सोच ऐसी थी कि जो कम्पनी माल खरीदने पर अधिक कमीशन देती उसी का माल सलैक्ट करते। पाँचवाँ ईमानदारी का आँचल थामे खड़ा था। वह कहता हमें तो माल से मतलब है। पर कमीशन बारे कहता– 'जो करेगा सो भरेगा।'

समय गुजरता गया।

एक दिन उस पाँचवें कर्मचारी को पैसे की जरूरत पड़ गई। उसने चारों ओर नजर घुमाई। सोचा किससे पैसे मांगे। पर जहाँ भी ध्यान जाता यही सोच कर पाँव पीछे हट जाते कि वे मेरे बारे में क्या सोचेंगे। इतने बड़े अधिकारी को पैसे की जरूरत पड़ गई। वह यही सोच परेशान हो उठा, अब करे तो क्या करे।

काफी सोच विचार के बाद उसे अपने उन चार सहयोगियों की याद आई, जो परचेजिंग कमेटी के सदस्य थे। उसने सोचा, क्यों न उनसे अपना हिस्सा मांगा जाए। मैंने कौन-सा गंगाजल उठाकर कसम खाई थी। अब पैसे की

जरूरत है और जरूरत किसी को भी पड़ सकती है। और यही सोचता वह एक सहयोगी के घर पहुँच गया।

उसने बातों-बातों में कहा–''मिस्टर रमन! मुझे पैसे की बहुत अधिक जरूरत है। मैं चाहता हूँ मेरा जो कमीशन में हिस्सा बनता है उसे दे दीजिए।''

''सर आप ऐसा न करें।'' बड़ी तत्परता के साथ कहा सहयोगी ने।

''क्यों भई? मैं क्यूँ न लूँ?'' उसके भीतर भी बेशर्मी अपना सिर उठाने लगी।

''सर, पैसा जितना चाहे आप मुझसे ले जाइए। आपसे जब बने तब दे देना। पर कमीशन की बात मत कीजिए।''

''मैं आपसे उधार क्यूँ लूँ। कमीशन में मेरा हिस्सा बनता है।'' उसे लगा कि सहयोगी उसे टरका रहा है। इसलिए अब वह नाराज हो चला था।

''बनता है सर... पर।''

''पर क्या?''

''सर आपने अपनी जिंदगी ईमानदारी में गुजार दी। लोग आपके नाम की कसमें खाते हैं। सर, पूरी कम्पनी आपका दिल से आदर करती है...।''

''आदर तो आपका भी करती है?'' उसने प्रतिप्रश्न किया।

''करती है, पर हमारे सामने, जबकि आपका सम्मान आपके सामने भी और पीठ पीछे भी। सर, हम तो कीचड़ हो चुके हैं और आप हैं कीचड़ में खिले कमल के फूल। सर, आप कीचड़ मत बनिए।'' सहयोगी के स्वर में अनुरोध भरा आग्रह था।

वह बहुत देर तक सोचता रहा और फिर उससे रुपया उधार लेकर घर वापिस आ गया।

मीनाक्षी जिजीविषा

नई वर्णमाला

मान्या की पुरानी कामवाली काम छोड़कर चली गयी व उसकी जगह जो नयी काम वाली आयी, वह अपने साथ अपनी सात वर्षीय बेटी को भी लाती थी। जब तक वह काम करती, उसकी बेटी खेलती रहती या फिर टी.वी. देखती रहती क्योंकि मान्या ने बच्चों से काम करवाने के लिए मना कर दिया था।

'तुम इसे स्कूल क्यों नहीं भेजती?'

मान्या ने एक दिन काम वाली बाई से पूछा।

'बीबी, जी इतने पैसे ना हैं मेरे धोरे, फिर स्कूल के बाद किस धोरे रह्वैगी, छोरी जात है, अकेली भी न छोड़ सकूँ, इसीलिए बीबी जी गेल ही ले आवैं हैं, कुछ काम काज सीख लेवैगी।'

एक दिन मान्य उस बच्ची सू यूँ ही बात करने लगी।

'तुम्हारा नाम क्या है, बिटिया?'

'ज्ञानी'

'बड़ा सुन्दर नाम है, इसका मतलब समझती हो?'

'नहीं।'

'मैं तुम्हें पढ़ाऊँ तो पढ़ोगी?' मान्या ने उससे पूछा।

'हाँ पढ़ूँगी'

और उस दिन से मान्या ने नर्सरी की वर्णमाला की पुस्तक ले, उसे अक्षर ज्ञान करवाना शुरू कर दिया।

बोलो 'क... से कबूतर। ख...ख से खिलौना।

और ज्ञानी भी बड़ी मासूमियत से उसके पीछे-पीछे 'क कबूतर, ख खिलौना' बोलती जाती। इस तरह उसे अक्षर ज्ञान हो गया था और उसे पढ़ने में मजा भी आने लगा था।

अभी महीना-डेढ़ ही बीता होगा कि उसकी मां बीमार पड़ गयी तथा ज्ञानी मां की जगह पर काम करने आने लगी। मान्या उससे काम करवाना नहीं चाहती थी पर उसने कहा कि ठीक होते ही मां काम पर आयेंगी। उसकी मां की बीमारी लम्बी खिंच गई और दो महीने बीत गये। एक दिन झाड़ू लगाती ज्ञानी से मान्या ने अपनेपन से पूछा, 'पढ़ना-लिखना कुछ याद है या सब भूल गई?'

'हाँ याद है।'

'अच्छा बताओ क से... ?'

'काम... ।'

'नहीं बेटा कबूतर।'

'अच्छा बताओ ख से... ?'

'खाना... ।'

'नहीं बेटे ख से खिलौना... ।'

'अच्छा छोड़ो...ग से बताओ.... ?'

'ग से गाली।'

'नहीं...ग से गमला होता है।' मान्या ने खीझ कर कहा, 'अच्छा 'प' से बताओ–

'प से पैसा...' ज्ञानी ने मासूमियत से जवाब दिया।

पंकज शर्मा

जब तक

बस अड्डे से निकल कर अनिल अपने दोस्त के साथ सीधा रिक्शा स्टैंड की तरफ चल पड़ा। एक रिक्शा वाले ने तुरंत आगे आकर पूछा, ''कहाँ जाओगे बाबू जी?''

''नीम वाला चौक'', अनिल ने उत्तर दिया।

''किसकी बारी है भई?'' उसने तुरंत आवाज लगायी।

''मेरी...'', एक आवाज हाथ उठाते हुए आई।

''आजा फिर'', कहकर पहले वाला पीछे हट गया। दूसरे वाले ने फिर वही प्रश्न दोहराया और जवाब पाते ही बोला, ''ठीक है बाबू जी बैठो।''

''क्या लोगे?'' अनिल ने आम सा सवाल किया।

''पच्चीस रुपये बाबू जी'', उसने कहा।

''बीस ले लेना'', अनिल का दोस्त बोला।

''नहीं बाबू जी, दूर बहुत है, वारा नहीं खाता'', रिक्शे वाला बेचारगी के भाव लाते हुए बोला।

''देख लो'', दोस्त ने दोहराया।

''नहीं बाबू जी'', उसका वही जवाब था।

तभी एक ऑटो वहाँ आ गया, ''नीम वाला चौक, ... दस-दस रुपये सवारी।'' तुरंत कुछ लोग ऑटो की तरफ हो लिये।

अनिल ने रिक्शे वाले से कहा, ''चलो भईया, पच्चीस ही ले लेना।''

रिक्शा वाला तुरंत चल दिया। सवारी मिलने की खुशी उसके बदन से साफ झलक रही थी।

गंतव्य स्थान पर पहुंचा कर रिक्शा वाला अपना मेहनताना लेकर चला गया।

दोस्त ने पूछा, ''जब दस-दस रुपए में ऑटो मिल रहा था तो फिर रिक्शा क्यों किया?''

''ताकि मनुष्य और मशीन की जंग में मनुष्यता बची रहे...'', अनिल का संक्षिप्त सा उत्तर था।

''कब तक....?'' दोस्त ने फिर प्रश्न किया।

उसका उत्तर था, ''...जब तक...।''

कृष्ण लता यादव

पहचान

सार्वजनिक कार्यालय में काउंटर पर कर्मचारियों की लम्बी कतार। किसी के सामने नाम पट्टिका नहीं। न जाने इनमें रत्ना कौन है। पूछने पर एक कर्मचारी ने बताया, पकौड़े-सी नाक, बिल्ली की-सी आँखें, हाथ के-से कान और ऊँट के-से होंठों वाली महिला रत्ना है।

मैं कुछ आगे बढ़ी। दिमाग में बिल्ली, ऊँट, हाथी के चित्र बनने-बिगड़ने लगे तो झुँझलाहट हुई। एक अन्य कर्मचारी से पूछताछ की। उत्तर मिला, ''सबसे भोली सूरत वाली स्त्री को रत्ना समझिए।''

मस्तिष्क में रह-रहकर प्रश्न उठ रहा था—''रत्ना के बहाने इन दोनों ने अपनी पहचान नहीं बता दी?''

गुलशन मदान

अनहोनी

आज वह ट्यूशन पर लेट हो गई थी। सर्दियों में दिन भी जल्दी ढल जाता है। गली में बल्ब भी नहीं है। अंधेरा भी हो गया है। वह जल्दी-जल्दी चल रही है। सामने गली का मोड़ आ गया है और उसके साथ लगते हुए पार्क क उस पार उसका घर है। गली खत्म होते ही वह पार्क में घुस गयी। पार्क सुनसान है, वह एक बारगी ठिठक जाती हैं। लेकिन सामने ही तो उसका घर है और फिर दूसरी गली वाला रास्ता तो बहुत लंबा है और वे लेट भी हो रही है। पार्क में घुसते ही किसी ने उसक हाथ जोर से पकड़ लिया था। वह चिल्लाना ही चाहती थी कि मुंह पर बड़ी सी हथेली ने उसका मुंह दबा दिया था, फिर भी उसके मुँह से हल्की सी चीख निकल गयी थी।

''कौन है'' एकाएक भारी भरकम आवाज़ सुनकर वह उसका हाथ छोड़कर भाग गया था। सामने एक सिपाही डंडा, जमीन पर मारते हुए उसके सामने आ गया, वह और भी घबरा गयी। 'वो...वो....मुझे' उसका काव्य पूरा होने से पहले ही वह बोला-मुझे मालूम है..रसाला फिर भाग गया है, तू जा बेटी.. कहाँ रहती है' वह थोड़ा विनम्र होकर बोला। 'जी सामने ही घर है मेरा...ट्यूशन से थोड़ा लेट हो गयी थी' वह अपनी सफाई में कुछ कहना चाहती थी।

चल बेटी चल...मैं छोड़ देता हूँ...वह साथ चलने लगा, लेकिन अँधेरे में उसकी शक्ल देखकर वह और भी भयभीत हो रही थी। पार्क खत्म होते ही गली में घर के द्वार तक आ गयी तो साँस से साँस आयी।

'और हाँ थोड़ा टाइम से... टाइम बहुत खराब है' वह नसीहत देता हुआ चला गया।

वह सहमी हुई जाते हुए उस सिपाही को अप्रत्याखित भाव से देख रही थी, जैसे कोई अनहोनी हो गयी हो।

वनीता चोपड़ा

दर्द की जुबान

निशा अभी नींद से जागी भी नहीं थी कि उसके कानों में ढोलक की आवाज़ सुनाई दी। उसके आँगन में तीन-चार हिजड़े आ गए थे। देखते ही देखते पड़ोसी भी आ गए। उनमें से एक हिजड़ा नाच रहा था, बाकी तीन ढोलक और ताली पर थे। कोई आध धण्टा नाचने के बाद औरत की शक्ल वाले हिजड़े ने कहा–

''लाओ मेरा नेग।''

निशा की चाची थाली में 2100 रुपये रखकर लाई तो वह इतने में नहीं मानी। नाचने वाले हिजड़े ने अभी जब पाँव में घुँघरू बांधे थे, तो निशा का दिल भर आया था। निशा की माँ दो साल पहले ही चल बसी थी। तब से वह दूसरों के दुख को बड़ा महसूस करती है।

चाची ने एक चाल चली। उसने नेग की थाली चाचा के हाथ में रखी, तब भी हिजड़े ने स्वीकार नहीं की। वह बोला-मेरा कौन-सा खसम बैठा है कमाने वाला कल मैंने भी सारा दिन भूखी रहकर करवा का व्रत रखा। हाथों में मेंहदी भी रचाई पर जब चाँद निकला तो सोचने लगी किसका मुँह देखूँ, मुझे कौन पानी पिलाएगा। यह सोच मैंने कलाइयों की चूड़ियाँ तोड़ डालीं।'' वह सुबकने लगी थी। सब लोग हिजड़े की बात सुनकर हँस पड़े। लेकिन निशा उसे देखे जा रही थी। उसने हिज़डे की आँखों में दर्द का सैलाब उमड़ता देख लिया था।

तभी निशा ने अपने चाचा से नेग की थाली लेकर हिजड़े की तरफ बढ़ाई, जिसे उसने फौरन स्वीकार कर लिया। उन दोनों का दर्द कहीं एक-सा था, लेकिन बाकी सब दर्द की जुबान को नहीं– समझ पाए थे।

अशोक कुमार

अपने-अपने कर्म

उस दिन मैं हिसाब-किताब करने के लिए ईंट भट्ठे पर गया हुआ था, भट्ठे का मालिक आने में थोड़ी देर थी, अत: उसकी अनुपस्थिति में मुनीम से हिसाब-किताब जुड़वाने लगा, तभी एक महिला अपने लड़के के साथ वहाँ ईंट लेने के लिए पहुँची। मेरा काम हो जाने के बाद वह मुनीम से बतियाने लगी। मैं वहीं बैठा था और मालिक का इंतजार कर रहा था। उन दोनों की बातचीत के दौरान मुझे पता चला कि वह महिला मालिक की दूर की रिश्तेदारी से है और नाते में बहन लगती हैं, पर वे शायद ही कभी कहीं मिले हों ऐसा मुझे लग रहा था..करीब आधा घंटा में मालिक आया और अपने अलग कमरे में जा बैठा, उसने मुझे और मुनीम को वहीं बुला लिया। मैंने उससे पैसे का लेन-देन कर लिया। तब मुनीम ने कहा, ''बाऊजी वह महिला आपकी किसी रिश्तेदारी से है और नाते में अपने को आपकी बहन बताती हैं, उसे लाखों ईंट खरीदनी हैं, कह रही थी भाव में कुछ रियायत कर दें...या जैसा आप कहीं।''

मालिक ने कहा, ''रियायत की बात हिसाब-किताब करते समय बाद में कर लेंगे, इस समय वह हमारी ग्राहक है उसे अच्छे-से चाय-बिस्किट खिलाओ, रिश्तेदारी में बहन लगती है इस नेग सम्मान में पचास रुपए दे देना, महिला है, दूर से आई है, इसलिए माल पहले पहुँचवा देना, लेकिन माल दो-तीन नंबर वाला मिक्स करके भरवाना समझे,'' मुनीम ने कहा, ''जी समझ गया पर माल मिक्स क्यों? वह रुपए अब्बल के दे रही है और ऊपर से वह रिश्तेदारी में हैं,'' मालिक, ''तभी तो फायदा उठाना है, वहाँ दोयम, बूँदमारी, चटका सभी मिक्स भेजना क्योंकि ऐसी जगह से वापसी या अन्य शिकायत की गुंजाइश नहीं हैं'' यह सुनकर मुनीम बाहर आ गया, मैंने बहुत हिम्मत करके अपनी दुविधा मिटाते हुए पूछ ही लिया, ''आपने कई तरह की बातें एक साथ कैसे कीं? यह कौन-सा धर्म है?'' मालिक ने कहा, ''देखिए मास्टर जी, वह रिश्तेदारी के नाते बहन लगती है उसे नेग देकर सम्मान करना मेरा व्यक्तिगत धर्म है, चाय-पानी देना मेरा सामाजिक धर्म है, वह महिला है दूर से आई है इसलिए पहले माल पहुँचवाना मेरा नारी के प्रति सम्मान व राजनीतिक धर्म है।'' वह मेरी पीठ थपथपाते हुए अपनी गाड़ी की ओर बढ़ गया। और मैं प्रत्येक कार्य के अपने-अपने धर्म के मर्म को समझने में लगा रहा।''

कृष्ण कुमार निर्माण

अगुवा

सभा चल रही थी। अच्छी खासी हाजिरी थी। हर कोई गम्भीरता से सुन रहा था। अध्यक्ष महोदय ने अपना अध्यक्षीय सम्बोधन प्रारम्भ किया—प्यारे भाइयो! अगर हमें समाज को सुधारना है तो समाज को प्रतिदिन सुरसा राक्षसी की तरह खाये जा रही जातिवाद की भावना को समाप्त करने के लिए निम्न जाति के लोगों से रोटी व बेटी का रिश्ता जोड़ना ही होगा।

तालियों की गड़गड़ाहट के बीच अध्यक्षीय सम्बोधन का स्वागत किया गया। कुछ दिन बाद उसी अध्यक्ष की एक कन्या जो कि कॉलेज में एम.ए. समाजशास्त्र की छात्रा थी ने एक दलित लड़के के साथ भागकर विवाह रचा लिया। बड़ा बखेड़ा हुआ। सारे बखेड़े पर उसी अध्यक्ष ने टिप्पणी की – 'ऐसे तो समाज का सामाजिक ताना-बाना ही बिखर जायेगा।' और वे इस तरह के विवाह रुकवाने वालों की मुहिम के अगुवा बन गये।

लेखक-परिचय

विष्णु प्रभाकर - जन्मतिथि: 21.06.1912, जन्मस्थान: मीरापुर, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)। शिक्षा: हिंदी भूषण, प्राज्ञ, प्रभाकर, बी.ए.। प्रकाशित कृतियां: 30 कहानी-संग्रह, 14 नाटक, 17 एकांकी संग्रह, 22 जीवनी-संस्मरण, 2 आत्मकथा, 5 यात्रा-वृत्तांत, 5 विचार-निबंध-संग्रह, 12 बाल साहित्य, 4 पूर्ण नाटक, 3 जीवनी साहित्य, 3 रूपांतर, 20 विविधा, 2 अनूदित, के साथ-साथ 3 लघुकथा-संग्रह 'जीवन पराग' (1963), 'आपकी कृपा है' (1982) तथा 'कौन जीता कौन हारा' (1989) प्रकाशित। 'संपूर्ण लघुकथाएं' पुस्तक 2009 में प्रकाशित। पारिवारिक संपर्क: अतुल प्रभाकर, ए-49 नोएडा-201003 (उ.प्र.)। स्मृति-शेष : 11.04.2009।

रमेश बत्तरा- जन्म: 23.11.1950 जालंधर (पंजाब)। सारिका, 'नवभारत टाइम्स', 'संडेमेल' आदि के सम्पादन विभाग में रहकर लघुकथा को गंभीरता से सामने लाए। तीन कहानी संग्रहों के अलावा बीसेक लघुकथाएं व लघुकथा पर अनेक महत्वपूर्ण लेख प्रकाशित। 15.03.1999 को असामयिक निधन।

प्रेम सिंह बरनालवी- जन्मतिथि: 14.06.1944, जन्मस्थान: बरनाला अम्बाला। शिक्षा: बी.ए.। प्रकाशित कृतियां: दो कहानी-संग्रह, एक उपन्यास, एक कहानी संग्रह (पंजाबी) और दो हिंदी लघुकथा-संग्रह देवता नहीं रहे, मैं हूँ ना' प्रकाशित। 2014 में निधन। पारिवारिक सम्पर्क: गाँव बरनाला, धनकौर, अम्बाला शहर जिला अम्बाला-134007। निधन : 2014।

पृथ्वीराज अरोड़ा- जन्मतिथि: 10.10.1939 जन्मस्थान: बुचेकी, ननकाना साहिब (अब पाकिस्तान में)। शिक्षा: एम.ए., बी.एड.। प्रकाशित कृतियां: उपन्यास, कहानी-संग्रह के अलावा दो लघुकथा संग्रह तीन न तेरह, आओ इंसान बनाएं। पारिवारिक सम्पर्क: L.D.-307, ग्राऊंड फ्लोर, सीएचडीसीटी, सेक्टर-45, करनाल-132001। निधन : 20.12.2015।

अंजु दुआ जैमिनी- जन्मतिथि: 08.06.1969, जन्मस्थान: सोनीपत। शिक्षा: एम.ए. (हिंदी) पत्रकारिता एवं जनसंचार, पीएच डी.। व्यवसाय: आयकर विभाग दिल्ली में कार्यरत। प्रकाशित कृतियां: कविता, कहानी और निबंध की तेरह पुस्तकों के अलावा 'कस्तूरी गंध' लघुकथा संग्रह प्रकाशित। सम्पर्क: 839, सेक्टर- 21 सी, फरीदाबाद।

अमृतलाल मदान- जन्मतिथि: 02.08.1941, जन्म स्थान : तौंसा शरीफ जिला डेरा ग़ाज़ी खां (अब पाकिस्तान में)। शिक्षा: एम.ए. (हिंदी/अंग्रेजी) व्यवसाय: रा.कृ.स. धर्म कॉलेज, कैथल से अंग्रेजी के विभागाध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त। प्रधान, साहित्य सभा, कैथल। प्रकाशित कृतियां : साहित्य की विविध विधाओं, विशेषकर उपन्यास, नाटक, एकांकी व कहानी पर अठाईस पुस्तकों के अलावा 'बूढ़ा सूरज तथा अन्य लघुकथाएँ' पुस्तक प्रकाशित। संपर्क: 'सार शब्द कुंज' 623, प्रोफेसर कॉलोनी, कैथल-136027।

अरुण कुमार- जन्मतिथि: 06.02.1969, जन्मस्थान: कुरूक्षेत्र। शिक्षा: बी.ई (मैकेनिकल)। व्यवसाय: सहायक अभियन्ता, लोक निर्माण विभाग, भवन एवं मार्ग। प्रकाशित कृतियां: एक कहानी-संग्रह और एक लघुकथा-संग्रह 'बाजार' प्रकाशित। संपर्क 895/12, आज़ाद नगर, कुरुक्षेत्र 136119।

अशोक कुमार: जन्म: 06-5-1979 दुराना (गोहाना)। शिक्षा: एम.ए. (हिंदी), पी-एच.डी.। व्यवसाय: स्कूल अध्यापक। संपर्क: गाँव व डाक-दुराना, तहसील-गोहाना, जिला सोनीपत-131006।

अशोक भाटिया- जन्मतिथि: 05.01.1955, जन्मस्थान: अम्बाला छावनी। शिक्षा: एम.ए हिंदी, एम.फिल., पीएच.डी.। व्यवसाय: एसोसिएट प्रोफेसर पद से सेवानिवृत्त, आजकल स्वतंत्र लेखन और सामाजिक कार्य। प्रकाशित कृतियां: समुद्र का संसार (बाल साहित्य), दो लघुकथा-संग्रह जंगल में आदमी, अंधेरे में आँख (मराठी व तमिल में भी), समकालीन हिंदी लघुकथा (आलोचना) निर्वाचित लघुकथाएं, विश्व साहित्य से लघुकथाएं, पैंसठ हिंदी लघुकथाएं, नींव के नायक 'पंजाब से लघुकथाएं' (लघुकथा पर सम्पादित पुस्तकें) आदि प्रकाशित। संपर्क: 1882, सैक्टर-13, अरबन इस्टेट, करनाल-132001।

आनन्द– जन्मतिथि: 16.06.1946, जन्मस्थान: गांव- पुर (भिवानी)। शिक्षा: एम.ए. हिंदी, प्रभाकर। व्यवसाय : खेती। प्रकाशन: एक उपन्यास और एक निबंध-संग्रह के अलावा कुछ लघुकथाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। संपर्क: गाँव व डाक - पुर, जिला भावानी-127032 (हरियाणा)।

आशमा कौल-जन्म: 01.01.1961 श्रीनगर, कश्मीर। शिक्षा: बी.कॉम. ऑनर्स। कार्यक्षेत्र: केन्द्रीय सचिवालच न. दिल्ली में कार्यरत। लेखन-क्षेत्र: कविता और लघुकथा। प्रकाशन: चार कविता संग्रह प्रकाशित। संपर्क: मकान नं 2665, सेक्टर-16, फरीदाबाद-121006।

इन्दिरा खुराना- जन्मतिथि: 06.04.1944, जन्मस्थान: रोहरी (सिंध,

अब पाकिस्तान), शिक्षा: एम. ए. (हिंदी संस्कृत) व्यवसाय: स्वंतत्र लेखन। प्रकाशित कृतियां: दो लघुकथा-संग्रह 'औरत होने का दर्द, 'गांधारी की पीड़ा' प्रकाशित। संपर्क: 617-आर, मॉडल टाऊन, पानीपत।

इन्दु गुप्ता-जन्मतिथि: 24 अगस्त, जन्मस्थान: नारायणगढ़। शिक्षा: एम.एस.सी.(रसायन विज्ञान) एम.एड., पी.डी.जी.एच.ई. डिप्लोमा इन कंप्यूटर प्रोग्रामिंग, एम.ए.हिंदी, पी-एच. डी., व्यवसाय : प्राचार्या, रा.व.मा.वि. फरीदाबाद। प्रकाशित कृतियां: एक हाइकू संग्रह, एक काव्य-संग्रह, आठ कथा-संग्रह, एक बाल काव्य-संग्रह के साथ-साथ 'भविष्य से साक्षात्कार' लघुकथा-संग्रह प्रकाशित। संपर्क: 348 सैक्टर 14, फरीदाबाद।

उर्मि कृष्ण-जन्मतिथि: 14.04.1938, जन्मस्थान: हरदा मध्यप्रदेश। शिक्षा: एम.ए. (राजनीति शास्त्र) साहित्य रतन, मांटेसरी ट्रेंड (बाल शिक्षा का डिप्लोमा)। व्यवसाय: निदेशक, कहानी लेखन महाविद्यालय, संपादन शुभ तारिका मासिक पत्रिका अम्बाला छावनी। प्रकाशित कृतियां: एक उपन्यास, पांच कथा-संग्रह, आठ बाल साहित्य की पुस्तकें, और एक लघुकथा संग्रह 'दृष्टि' प्रकाशित। संपर्क: ए-47, शास्त्री कॉलोनी, अम्बाला छावनी-133001।

उषा लाल— जन्म: 25.4.1955, लाडवा (कुरुक्षेत्र)। शिक्षा: एम.ए. हिंदी, पी-एच. डी.। व्यवसाय: पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, अब स्वतंत्र लेखन। कविता, लघुकथा व संस्मरण लेखन। अब तक पाँच आलोचना-पुस्तकें प्रकाशित। संपर्क: 1218, सेक्टर 13, कुरुक्षेत्र-136118।

ओम प्रकाश 'करुणेश'-जन्म: 06.05.1956 कुरुक्षेत्र। शिक्षा: हिंदी में एम.ए., एम.फिल्, पी-एच.डी.। व्यवसाय: सेवा-निवृत्त प्रोफेसर व प्राचार्य। लेखन क्षेत्र: कविता, गीत, लघुकथा। संपर्क: 1826-2/ वार्ड 8, शीला नगर, कुरुक्षेत्र-136118।

ओमप्रकाश कादियान— जन्म: 1966 बेरी, जिला झज्जर (हरि.)। शिक्षा: एम. ए. हिंदी, हरियाणा लोक साहित्य एवं कला संस्कृति में स्नातकोत्तर डिप्लोमा। कार्यक्षेत्र: अध्यापन व स्वतंत्र पत्रकारिता। प्रकाशन: एक बाल गीत संग्रह के अलावा 'आन्ध्यां की लाट्ठी' और 'कैक्टस के फूल' लघुकथा संग्रह प्रकाशित। संपर्क: 1416, सैक्टर-13, हिसार-125005।

कमल कपूर- जन्मतिथि: 02.05.1953, जन्मस्थान: कोटा (राजस्थान)। व्यवसाय: स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित कृतियां: छह कथा-संग्रह, दो काव्य-संग्रह और दो लघुकथा-संग्रह 'आस्था के फूल, और 'हरी सुनहरी पत्तियां' प्रकाशित।

संपर्क: 2144/9 फरीदाबाद-121006।

कमला चमोला- जन्मतिथि: 15.08.1949, जन्मस्थान: पंचमढ़ी (म.प्र.)। शिक्षा: एम.ए. (अर्थशास्त्र)। प्रकाशित कृतियां : एक सौ के लगभग कहानियां और तीन सौ के करीब बाल कहानियां विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। संपर्क: सैक्टर: 254, सैक्टर-15 ए, हिसार-125001।

कमलेश चौधरी-जन्मतिथि: 13.07.1954, जन्मस्थान: गाँव नाहरी, जिला सोनीपत। शिक्षा: प्रभाकर, ओ.टी, बी.ए, बी.एड.। व्यवसाय: सेवानिवृत्त हिंदी अध्यापिका, अब स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित कृतियां: उपन्यास, कहानी एवं बाल साहित्य की एक-एक पुस्तक प्रकाशित। सम्पर्क: गाँव बाबैन, जिला कुरुक्षेत्र-136156।

कृष्ण कुमार निर्माण- जन्म: 15-6-75 गाँव बरौदा (जिला सोनीपत)। शिक्षा: एम.ए. हिन्दी, बी.एड., एल.एल. बी, पी जी डी एम सी। लेखन: कविता, लघुकथा। व्यवसाय: हिंदी अध्यापक। संपर्क: मकान नं 1044, गली नं. 1, शांति नगर, नज़दीक शिव मंदिर, करनाल-132001।

कृष्ण लता यादव जन्मतिथि: 12.12.1955, जन्मस्थान: गाँव भाकली, जिला रेवाड़ी। एम.ए. (हिंदी)। प्रकाशित कृतियां : एक बाल कविता संग्रह और तीन लघुकथा-संग्रह 'अमूल्य धरोहर, 'भोर होने तक', 'चेतना के रंग' प्रकाशित। व्यवसाय: हिंदी प्राध्यापक पद से सेवानिवृत्त। सम्पर्क: 1746, सैक्टर-10ए, गुड़गाँव-122001।

गुरनाम सिंह— जन्म: 4.9.68 होशियारपुर (पंजाब)। शिक्षा : पंजाबी में एम.ए., एम. फिल., बी.एड.। लेखन-क्षेत्र : लघुकथा, कविता। प्रकाशन: एक पंजाबी कविता-संग्रह के अलावा 'सत्यमेव जयते' लघुकथा-संग्रह प्रकाशित। व्यवसाय: स्कूल में प्राध्यापक। संपर्क: 511, न्यू चार चमन, मुख्य डाकघर के सामने, करनाल-132001।

गुलशन मदान- जन्म 05.02.1959 कैथल (हरियाणा)। शिक्षा: बी.ए.। व्यवयाय: स्टेट बैंक में अधिकारी। प्रकाशन 7 गज़ल संग्रह, तीन कहानी संग्रह, एक उपन्यास, एक दोहा-संग्रह, दो बालगीत संग्रह और दो काव्य-अनुवाद। संपर्क: 1532, सेक्टर 7, करनाल-132001।

घंमडीलाल अग्रवाल- जन्मतिथि: 25.10.1954, जन्मस्थान: पाड़ला (रेवाड़ी)। शिक्षा: एम.ए. (हिंदी), बीएड. पत्रकारिता में डिप्लोमा। व्यवसाय: आजकल स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित कृतियां: बाल साहित्य की 38 पुस्तकें,

गीत-संग्रह, गजल-संग्रह, दोहा-संग्रह और एक दर्जन पुस्तकों के सम्पादन के साथ-साथ 'आत्मबोध' लघुकथा संग्रह प्रकाशित। संपर्क: 785/8, अशोक विहार, गुड़गाँव-122006।

जितेन्द्र सूद- जन्मतिथि: 04.03.1938 जन्मस्थान: गाँव स्यालवा (कुराली, पंजाब)। शिक्षा: एम.ए. हिंदी, बी.ए. एड., प्रभाकर एल.टी.सी.। व्यवसाय: सेवानिवृत्त हिंदी प्राध्यापक अब, स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित कृतियां: चार कहानी-संग्रह, एक गद्यगीत और दो लघुकथा-संग्रह 'आज का सच', 'तश्तरी चांदी की' प्रकाशित। संपर्क 30, बैंक कॉलोनी, अम्बाला शहर।

तारा पांचाल- जन्म: 19-5-1950 नरवाना (हरियाणा)। शिक्षा: बी.ए.। चर्चित कहानीकार। 'गिरा हुआ वोट' और 'निर्वाचित कहानियाँ' कहानी-संग्रह। 'जतन' पत्रिका व 'बणछटी (कहानी संग्रह) का संपादन। जनवादी लेखक संघ हरियाणा के अध्यक्ष रहे। 20-6-2009 को निधन।

दुलीचन्द रमन- जन्म: 08.05.1971 करनाल। शिक्षा: एम.ए. हिन्दी। लेखन क्षेत्र: कविता, कहानी, लघुकथा। एक काव्य संग्रह 'देवता नहीं रहे' प्रकाशित। संप्रति: हिन्दी प्राध्यापक। संपर्क: गाँव पाढा, जिला करनाल-132001।

नरेन्द्र कुमार गौड़– जन्म: 7.7.1968. शिक्षा: स्नातक। प्रकाशन : तीन लघुकथा संग्रह 'अहसास', 'प्रतिबिंब' और 'तपन' प्रकाशित। संपर्क: 153/5, ए ब्लॉक, शीतला कॉलोनी, गुड़गाँव-122001।

पंकज शर्मा- जन्मतिथि: 19.09.1970, जन्मस्थान: चन्दौसी (उ.प्र.) शिक्षा: स्नातक। व्यवसाय: रेलवे विभाग में सेवारत। प्रकाशित कृतियां: दो लघुकथा-संग्रह सिर्फ तुम, डोर प्रकाशित। सम्पर्क: प्लाट नं 19, सैनिक विहार, सामने विकास पब्लिक स्कल, जण्डली, अम्बाला शहर।

प्रद्युम्न भल्ला-जन्मतिथि: 20.10.1967 जन्मस्थान: कैथल। शिक्षा: एम.ए. (अंग्रेजी, हिंदी) एम. एड., पी-एच डी.। व्यवसाय: अंग्रेजी प्राध्यापक। प्रकाशित कृतियां: तीन कथा-संग्रह, दो काव्य-संग्रह दो बाल-संग्रह एक एकांकी और एक लघुकथा-संग्रह 'लघुदंश' तथा एक संपादित 'सारांश' लघुकथा संकलन। सम्पर्क: 508, सैक्टर-20 शहरी संपदा, कैथल-136027।

प्रदीप शर्मा स्नेही- 07.05.1956, नरेला। शिक्षा: एम.एस-सी., एम.फिल., पी-एच. डी. (भौतिकी)। कार्यक्षेत्र: विभागाध्यक्ष एवं प्राचार्य, श्री आत्मानंद जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अम्बाला शहर। प्रकाशित कृति: चार कविता संग्रह, एक व्यंग्यिका-संग्रह, पाँच सम्पादित पुस्तकें और तीन लघुकथा-संग्रह

'सफेद होता खून', किरचें', 'अंतर्दीप' प्रकाशित। सम्पर्क: 1488, सेक्टर-9, अम्बाला शहर।

पूरन मुद्गल-जन्मतिथि: 24.12.1931, जन्मस्थान: फाजिल्का (पंजाब)। शिक्षा: एम.ए. हिंदी, बी.टी.। व्यवसाय: स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित कृतियां: चार काव्य-संग्रह, जीवनी, आलोचना के साथ-साथ दो लघुकथा-संग्रह 'निरंतर इतिहास', 'पहला झूठ'। संपर्क: 309/5 ए, अग्रसेन कॉलोनी, सिरसा 125055।

पवन चौधरी 'मनमौजी'-जन्मतिथि: 14.10.1941 कैथल। शिक्षा: एम.ए. अर्थशास्त्र एल.एल.बी. एडवोकेट सुप्रीम कोर्ट। व्यवसाय : स्वतंत्र पत्रकारिता एवं लेखन। प्रकाशित कृतियां: आठ निबंध-संग्रह, एक संस्मरण, एक आत्मकथा, दो लघुकथा-संग्रह कचहरी में कोहनूर, कानून के फूल प्रकाशित। सम्पर्क: चौधरी कुटीर, ई-31, मानसरोवर गार्डन, नयी दिल्ली-110015।

भगवान देव चैतन्य— जन्मतिथि: 15.07.1948, जन्मस्थान: रिवालसर (मंडी, हि.प्र.)। शिक्षा: एम.ए. हिंदी। व्यवसाय: केंद्र सरकार के वरिष्ठ हिंदी अधिकारी पद से सेवा-निवृत्त। प्रकाशन: 60 पुस्तकें, जिनमें एक उपन्यास, चार कहानी संग्रह, चार लघुकथा-संग्रह और पांच काव्य-संग्रह शामिल हैं। संपर्क: गांव व डाक- महादेव, तह. सुंदर नगर, जिला मंडी-174401 (हि.प्र.)

भगवान प्रियभाषी— जन्मतिथि: 01.08.1949, जन्मस्थान: गाँव नंदथला (हिसार)। शिक्षा: बी.ए., मकेनिकल इंजीनियरिंग में डिप्लोमा। लेखन-क्षेत्र: दो सौ से अधिक लघुकथाएं, कहानियां व कविताएं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। दूरभाष केन्द्र कुरुक्षेत्र से मंडल अभियन्ता पद से सेवा निवृत्त। संपर्क: 1489, सेक्टर 7, कुरुक्षेत्र-136118।

भुवनेश कुमार- जन्म: 27.3..1945 मुहल्ला अनारकली बाजार, लाहौर। शिक्षा: स्नातक (बीकानेर, खन्ना और जोधपुर में)। प्रकाशन: एक उपन्यास, दो बाल-पुस्तकों के अलावा 'रहना चुप मांओं का' गज़ल संग्रह। संपर्क: 220 सेक्टर 16, फरीदाबाद-121002।

मधुकांत— जन्मतिथि: 11.10.1949, शिक्षा: एम.ए. अर्थशास्त्र, बी.एड.। कार्यक्षेत्र: शैक्षिक पत्रकार व समाज-सेवी। प्रकाशन: 3 उपन्यास, 5 कहानी-संग्रह, 4 नाटक संग्रह। कविता संग्रह के अलावा 4 लघुकथा संग्रह प्रकाशित। संपर्क: संपादक - 'प्रज्ञा', सांपला, जिला रोहतक-124501।

डॉ मुक्ता- जन्मतिथि: 20 मार्च 1951, जन्मस्थान: भिवानी। शिक्षा: हिन्दी भाषा एवं साहित्य में एम.ए., पी-एच.डी.। व्यवसाय: स्वतंत्र लेखन।

प्रकाशित कृतियां: सात काव्य-संग्रह, एक निबंध-संग्रह, चार कहानी-संग्रह के अलावा चार लघुकथा-संग्रह 'मुखरित संवेदनाएं', 'आखिर कब तक', 'कैसे टूटे मौन', 'अंजुरी भर धूप' प्रकाशित। संपर्क: 342, पुराना हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, भिवानी-127021।

मुकेश शर्मा- जन्मतिथि: 22.02.1969 जन्मस्थान: गुड़गाँव। शिक्षा: एम.ए. हिंदी, एल.एल.बी., पत्रकारिता, एवं जनसंचार डिप्लोमा। व्यवसाय: एडवोकेट एवं कॉर्पोरेट कन्सलटेंट। एक कहानी-संग्रह और लघुकथा पर तीन संपादित पुस्तकें प्रकाशित। संपर्क: म.न. 1445, सैक्टर-4 अर्बन एस्टेट, गुड़गाँव-122006।

मधुदीप-जन्मतिथि: 01.05.1950, जन्मस्थान: ग्राम दुजाना, रोहतक। शिक्षा: कला स्नातक। प्रकाशित कृतियां: छह उपन्यास, कहानी-संग्रह,बाल उपन्यास के अलावा 'मेरी बात तेरी बात' और 'समय का पहिया' दो लघुकथा संग्रह। तनी हुई मुट्ठियाँ के अलावा हिंदी लघुकथा पर, पड़ाव और पड़ताल-15 खंड (संपादित) संपर्क: 138/16 त्रिनगर, दिल्ली-110035।

मीनाक्षी जिजीविषा-जन्मतिथि: जन्मस्थान: शिक्षा: एम.ए. एम.फिल, पी-एच.डी.। व्यवसाय: भारती जीवन बीमा निगम में कार्यरत। प्रकाशित कृतियां: पाँच काव्य-संग्रहों के अलावा एक लघुकथा-संग्रह 'इस तरह से भी' प्रकाशित। संपर्क: 892, सेक्टर-10 हाउसिंग बोर्ड, फरीदाबाद-121006।

रणजीत टाडा- जन्म: 18.3.1965 गाँव व पोस्ट सुल्तानपुरिया, तह राणिया, जिला सिरसा। शिक्षा: कला स्नातक, पत्रकारिता व जनसंचार में डिग्री। लेखन क्षेत्र: लघुकथा, कविता। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा कविता पुरस्कृत। दूरदर्शन केन्द्र हिसार में कार्यरत। संपर्क: दूरदर्शन केन्द्र, सेक्टर 13, हिसार-125005 (हरि.)।

रतन कुमार सांभरिया-जन्मतिथि: 06.01.1956, जन्मस्थान: गाँव भाड़ावास, जिला रेवाड़ी। शिक्षा: एम.ए., बी.एड., बी.जे.एम.सी.(पत्रकारिता में डिप्लोमा)। व्यवसाय: सूचना एवं जनसूचना अधिकारी। प्रकाशित कृतियां: एक एकांकी-संग्रह, दो कहानी-संग्रह, दो लघुकथा संग्रह 'बांग' और अन्य लघुकथाएं, 'प्रतिनिधि लघुकथा शतक' प्रकाशित। संपर्क: सी-137, भाड़ावास हाउस, महेश नगर, जयपुर-302015।

रमेश सिद्धार्थ- जन्म 06.02.1942 खुर्जा (बुलंदशहर) उ.प्र.। शिक्षा: एम.ए. अंग्रेजी। व्यवयाय: कॉलेज प्राध्यापक-पद से सेवा-निवृत्ति के बाद

स्वतंत्र लेखन। प्रकाशन: दो गज़ल संग्रह, एक बाल-गीत संग्रह के अलावा दो लघुकथा-संग्रह-'कालचक्र' और मानस गंध' प्रकाशित। संपर्क: 81-हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, रेवाड़ी-123401।

रामकुमार आत्रेय-जन्म: 1.2.1944, जन्मस्थान: ग्राम करोड़ा, जिला कैथल। शिक्षा: एम.ए. साहित्य रतन, बी.एड.। अब तक पांच काव्य संग्रह, तीन बालकथा संग्रह, एक कहानी संग्रह, तीन बालकथा-संग्रह, एक हरियाणवी दोहों के संकलन के साथ-साथ चार लघुकथा-संग्रह, इक्कीस जूते, आँखों वाले अंधे, बिना शीशों का चश्मा आदि प्रकाशित। सम्पर्क 864-ए/12 आजाद नगर, कुरुक्षेत्र-136119 (हरि.)।

रामेश्वर कांबोज 'हिमांशु'- जन्म: 19.3.1949, गाँव हरिपुर, सहारनपुर। शिक्षा: एम.ए. हिंदी, बी.एड.। तीन कविता-संग्रह, एक हाइकु संग्रह, दो लघु उपन्यास तथा 'असभ्य नगर' लघुकथा-संग्रह के अतिरिक्त कई लघुकथा-संकलनों व विशेषांकों का संपादन। केंद्रीय विद्यालय के प्रधानाध्यापक पद से सेवा-निवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन। 'लघुकथा डॉट कॉम' इंटरनेट (मासिक) के सह-संपादक। संपर्क: टॉवर एफ, 305 छठा तल, मैक्सहाइट, सेक्टर 62, पो.आ. पीएस राई-131029 (हरियाणा)।

रेनू शर्मा- जन्मतिथि: 15.10.1974: साकरा (कैथल)। शिक्षा: एम.ए. (हिंदी, राजनीति शास्त्र) बीएड, एम.एड.। व्यवसाय: अध्यापन। प्रकाशन: अनेक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित। संपर्क: रेनू शर्मा मकान न.321/2 रादौर (यमुनानगर) 135133।

रूप देवगुण-जन्मतिथि: 1.11.1943, जन्मस्थान: नरवड़ (लाहौर) अब पाकिस्तान में। शिक्षा: एम ए (हिंदी एवं पंजाबी) बी.एड.। व्यवसाय:सेवानिवृत्त हिंदी प्राध्यापक, अब स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित कृतियां: एक दर्जन से ऊपर काव्य-संग्रह, पांच कथा-संग्रह,गजल-संग्रह, चार संपादित पुस्तकें, समीक्षा, निबंध-संग्रह। 'दूसरा सच', 'यह मत पूछो', 'मेरी प्रिय लघुकथाएं', 'तो दिशु ऐसे कहता' लघुकथा -संग्रह प्रकाशित। सम्पर्क: डॉ. गांधी वाली गली, 13/676, गाबिंद नगर, सिरसा 125055।

लोक सेतिया- जन्मतिथि: 30.04.1951, जन्मस्थान: टोहाना। शिक्षा: जी.ए.एम.एस.। व्यवसाय: चिकित्सा, लेखन। प्रकाशित कृतियां: विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित। सम्पर्क : एस.सी.एफ-30, मॉडल टाउन, फतेहाबाद-125050।

वनीता चोपड़ा- जन्म 07.08.1982 शिक्षा: एम.ए. (हिंदी, इतिहास), बी.एड., एम. फिल्., पी-एच.डी. (हिंदी)। लेखन-विधाएं: कविता, लघुकथा। कुछ कविताएं इंटरनेट पर और पत्रिकाओं में प्रकाशित। संपर्क: गाँव-बीड़ नारायणा, डाक. सगा, तह. नीलोखेड़ी, जिला करनाल-132001।

विकेश निझावन- जन्मतिथि 07.10.1949, जन्मस्थान: अम्बाला शहर। शिक्षा: एम.ए. (हिंदी)। व्यवसाय: स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित कृतियां-एक उपन्यास, पांच पुस्तकें बाल साहित्य पर, तीन काव्य-संग्रह, नौ कथा-संग्रह और एक लघुकथा-संग्रह 'दुपट्टा' प्रकाशित। संपर्क: आई.टी.आई. बस स्टॉप के सामने, अम्बाला शहर।

विष्णु सक्सेना-जन्म: 26.1.1941, शिक्षा: ई.एम.ई. (ऑनर्स)। कार्यक्षेत्र: पूर्व-संवाददाता, 'दैनिक भास्कर', आजकल स्वतंत्र लेखन। प्रकाशन: चार कविता पुस्तकें, दो कहानी-संग्रह और एक खंडकाव्य प्रकाशित। संपर्क: बी-2/29धर्मपुर (भंडारी बाबा मंदिर के पीछे), पिंजौर-134102 (हरियाणा)।

श्याम सखा 'श्याम'-जन्म: 28.08.1948, शिक्षा: एम.बी.बी.एस., एफ.सी.जी.पी.। कार्यक्षेत्र: चिकित्सा। हिन्दी, अंग्रेजी, पंजाबी में लेखन। प्रकाशन: तीन उपन्यास, तीन कहानी-संग्रह, चार कविता संग्रह, एक गजल-संग्रह, एक दोहा सतसई, एक बालगीत संग्रह के अलावा, एक लघुकथा-संग्रह 'नाविक के तीर' प्रकाशित। सम्पर्क: फ्लैट नं. 703, जीएचएस 88, पल्लवी, सेक्टर-20, पंचकूला-134112।।

शील कौशिक- जन्मतिथि: 19.11.1957 जन्मस्थान: फरीदाबाद। शिक्षा: एम.एस-सी., बी.एड, एल.एल.बी., एम.एच.एम. (होम्यो)। व्यवसाय: जीव वैज्ञानिक, स्वास्थ्य विभाग। प्रकाशित कृतियाँ: दो कहानी-संग्रह, पाँच काव्य-संग्रह, आलोचना, समीक्षा व संपादन के साथ- साथ दो लघुकथा-संग्रह 'उसी पगडंडी पर पाँव', 'कभी भी-कुछ भी' प्रकाशित। संपर्क: 17, हुडा, सैक्टर-20 सिरसा-125055।

सुरेन्द्र कुमार— जन्मतिथि: 01.08.1950, जन्मस्थान: लुधियाना। शिक्षा: विज्ञान में स्नातक। कार्यक्षेत्र: हरियाणा के महालेखाकार कार्यालय चंडीगढ़ से वरिष्ठ लेखा अधिकारी पद से सेवा-निवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन। प्रकाशन: पाँच कहानी संग्रह, दो कविता-संग्रह के अलावा 'मेरी लघुकथाएँ' लघुकथा संग्रह प्रकाशित। संपर्क: 2821, इकबालगंज रोड, अम्बाला छावनी-133001।।

सुरेन्द्र गुप्त-जन्मतिथि: 05.05.1943, जन्मस्थान: कालका, जिला

पंचकूला। शिक्षा: एम.ए., पी-एच.डी.। व्यवसाय: भारत सरकार के डाक विभाग से सहायक निदेशक (राजभाषा) के पद से सेवानिवृत्त होकर वर्तमान में स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित कृतियां: एक कहानी-संग्रह, दो लघुकथा-संग्रह 'प्रसाद', 'यहाँ सब चलता है' प्रकाशित। सम्पर्क: आर.एन.-7 महेश नगर, अम्बाला छावनी-133001।

सुरेश जांगिड़ उदय- जन्मतिथि: 02.06..1965, जन्मस्थान: कैथल। शिक्षा: बी.ए.। व्यवसाय : स्वतंत्र लेखन। प्रकाशन : एक कहानी-संग्रह, एक काव्य-संग्रह और एक लघुकथा-संग्रह 'बाट मत जोहना' और विविध विधाओं पर 70 से अधिक पुस्तकों का संपादन प्रकाशित। संपर्क: डी.सी निवास के सामने, करनाल रोड, कैथल-136027।

हरभगवान चावला- जन्मतिथि: नवंबर, 1958, जन्मस्थान: विज्जूवाली, जिला सिरसा। शिक्षा: एम.ए. हिंदी, एम. फिल.। व्यवसाय: अध्यापन। प्रकाशित कृतियां: दो काव्य संग्रह, एक कहानी-संग्रह के साथ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लघुकथाएं प्रकाशित संपर्क: 406, सैक्टर-20, हुड्डा, सिरसा-125055।

हीरालाल नागर- जन्म: 03.07.1951 महोबा (म.प्र.)। शिक्षा: स्नातक। सूचना-प्रसारण और पत्रकारिता में स्नातकोत्तर डिप्लोमा। प्रकाशन: एक-एक उपन्यास, कहानी -संग्रह व कविता-संग्रह। लघुकथा-संग्रह प्रकाशनाधीन। व्यवसाय: भारतीय ज्ञानपीठ की पत्रिका 'नया ज्ञानोदय' में। संपर्क: बी-174/41-सी, सादतपुर विस्तार दिल्ली-1190094।